* ॐ श्रीपरमात्मने नमः *

कल्याण

श्रीभगवान्द्वारा अर्जुनको कर्तव्यबोध

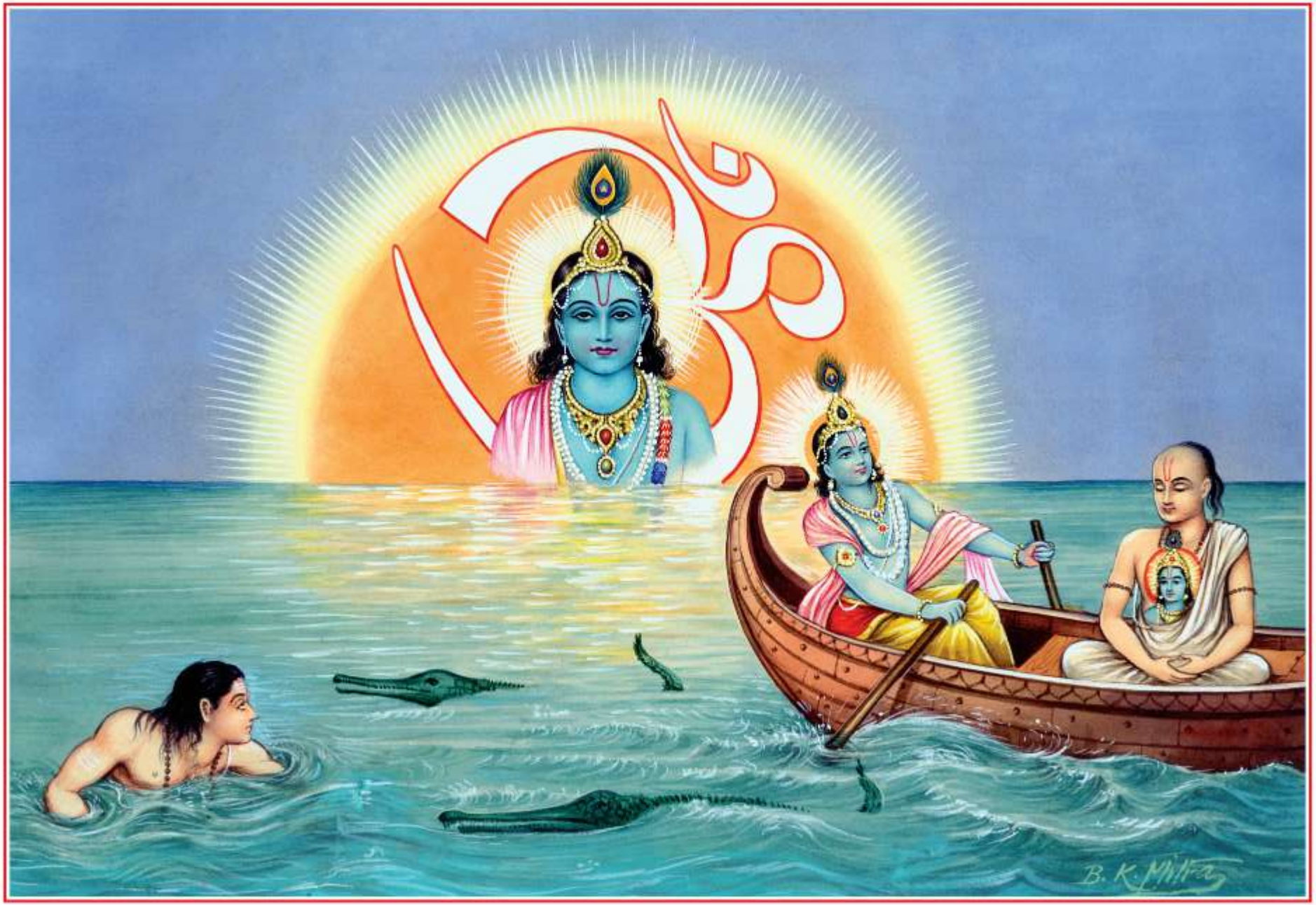

उद्धारकर्ता भगवान्

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात् पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते॥

कल्याण

मूक होइ बाचाल पंगु चढ़इ गिरिबर गहन।
जासु कृपाँ सो दयाल द्रवउ सकल कलि मल दहन॥

वर्ष ९६

गोरखपुर, सौर पौष, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-सं० ५२४८, दिसम्बर २०२२ ई०

संख्या १२

पूर्ण संख्या ११५३

उद्धारकर्ता श्रीभगवान्

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते। सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम्॥
सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः। ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः॥
क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम्। अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते॥
ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्पराः। अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते॥
तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात्। भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम्॥

जो पुरुष इन्द्रियोंके समुदायको भली प्रकार वशमें करके मन-बुद्धिसे परे, सर्वव्यापी, अकथनीयस्वरूप और सदा एकरस रहनेवाले, नित्य, अचल, निराकार, अविनाशी, सच्चिदानन्दघन ब्रह्मको निरन्तर एकीभावसे ध्यान करते हुए भजते हैं, वे सम्पूर्ण भूतोंके हितमें रत और सबमें समान भाववाले योगी मुझको ही प्राप्त होते हैं। उन सच्चिदानन्दघन निराकार ब्रह्ममें आसक्त चित्तवाले पुरुषोंके साधनमें परिश्रम विशेष है; क्योंकि देहाभिमानियोंके द्वारा अव्यक्तविषयक गति दुःखपूर्वक प्राप्त की जाती है। परन्तु जो मेरे परायण रहनेवाले भक्तजन सम्पूर्ण कर्मोंको मुझमें अर्पण करके मुझ सगुणरूप परमेश्वरको ही अनन्य भक्तियोगसे निरन्तर चिन्तन करते हुए भजते हैं। हे अर्जुन! उन मुझमें चित्त लगानेवाले प्रेमी भक्तोंका मैं शीघ्र ही मृत्युरूप संसार-समुद्रसे उद्धार करनेवाला होता हूँ। [श्रीमद्भगवद्गीता १२। ३—७]

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

(संस्करण १,८०,०००)

कल्याण, सौर पौष, वि० सं० २०७९, श्रीकृष्ण-सं० ५२४८, दिसम्बर २०२२ ई०, वर्ष ९६—अंक १२

विषय-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- उद्धारकर्ता श्रीभगवान्	३
२- सम्पादकीय	५
३- कल्याण	६
४- श्रीभगवान्द्वारा अर्जुनको कर्तव्यबोध [**आवरणचित्र-परिचय**]	७
५- महापुरुषोंकी महिमा [**अनमोल वचन**] (ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)	८
६- सन्त-तत्त्व-विवेचन (साधुवेषमें एक पथिक)	९
७- महाभारतमें अधर्म और धर्मका युद्ध (नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)	१०
८- प्रेम-तत्त्व [**सत्संग सन्तोंके संग**] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)	११
९- गीतोक्त श्लोकोंके अनुष्ठानकी विधि [**साधकोंके प्रति**] (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)	१२
१०- समय नहीं है [**बोध-कथा**]	१३
११- श्रीराधा-माधव—कहिअत भिन्न न भिन्न (अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज)	१४
१२- सत्यकी शक्तिका अद्भुत चमत्कार [**बोध-कथा**] (श्रीरघुनाथप्रसादजी पाठक)	१६
१३- यह 'और' 'और' की तृष्णा! [**हमारे आन्तरिक शत्रु**] (पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)	१७
१४- परिश्रम गौरवकी वस्तु है [**बोध-कथा**]	२१
१५- सहानुभूतिके दो मीठे शब्द! (प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र)	२२
१६- नियम-पालनका लाभ [**बोध-कथा**]	२४
१७- श्रीमद्भगवद्गीताकी महिमा [संकलन—स्वामी श्रीसंवित्सुबोधगिरिजी]	२५
१८- कश्मीरका शंकराचार्य-मन्दिर [**तीर्थ-दर्शन**] (श्रीबलविन्दरजी 'बालम')	२८
१९- जीवनका यथार्थ—सतत सुकर्मशीलता (श्रीपीयूषकुमार त्रिपाठी)	२९
२०- महल नहीं, धर्मशाला [**बोध-कथा**]	३०
२१- परिग्रहसे परिताप (श्रीताराचन्दजी आहूजा)	३१
२२- छत्तीसगढ़के सन्त गुरु घासीदासजी [**सन्त-चरित**] (डॉ० श्रीप्रदीप कुमारजी शर्मा)	३३
२३- भगवन्नाम-चिन्तन	३४
२४- गोसंरक्षण—श्रीकृष्णावतारका मुख्य उद्देश्य (श्रीजयदीपसिंहजी) [**गो-चिन्तन**]	३५
२५- सुभाषित-त्रिवेणी	३६
२६- व्रतोत्सव-पर्व [**माघमासके व्रत-पर्व**]	३७
२७- व्रतोत्सव-पर्व [**फाल्गुनमासके व्रत-पर्व**]	३८
२८- गीतापाठके अद्भुत चमत्कार (श्रीसुरेशचन्द्रजी मिश्र, शास्त्री, ज्योतिषाचार्य)	३९
२९- असहायके आश्रय [**बोध-कथा**]	४०
३०- कृपानुभूति	४१
३१- पढ़ो, समझो और करो	४२
३२- मनन करने योग्य	४५
३३- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची	४६

चित्र-सूची

१- श्रीभगवान्द्वारा अर्जुनको कर्तव्यबोध	(रंगीन)	आवरण-पृष्ठ
२- उद्धारकर्ता श्रीभगवान्	(,,)	मुख-पृष्ठ
३- अर्जुनको गीताको उपदेश देते भगवान् श्रीकृष्ण	(इकरंगा)	१२
४- कश्मीरका शंकराचार्य-मन्दिर	(,,)	२८

जय पावक रवि चन्द्र जयति जय। सत्-चित्-आनँद भूमा जय जय॥
जय जय विश्वरूप हरि जय। जय हर अखिलात्मन् जय जय॥
जय विराट् जय जगत्पते। गौरीपति जय रमापते॥

एकवर्षीय शुल्क ₹500 एवं पंचवर्षीय शुल्क ₹2500 सभी अंक रजिस्ट्रीसे
एकवर्षीय शुल्क ₹300 एवं पंचवर्षीय शुल्क ₹1500 मासिक अंक साधारण डाकसे
विदेशमें Air Mail शुल्क वार्षिक US$ 50 (₹4,000), पंचवर्षीय US$ 250 (₹20,000)
Us Cheque Collection Charges 6 $ Extra

संस्थापक—**ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका** आदिसम्पादक—**नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार**
सम्पादक—**प्रेमप्रकाश लक्कड़**
केशोराम अग्रवालद्वारा गोबिन्दभवन-कार्यालय के लिये गीताप्रेस, गोरखपुर से मुद्रित तथा प्रकाशित

website : **gitapress.org** | e-mail : **kalyan@gitapress.org** | ✆ **09235400242/244** | **WhatsApp : 9648916010, 8188054404**

सदस्यता-शुल्क—**व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—273005, गोरखपुर को भेजें।**
Online सदस्यता हेतु gitapress.org के **Kalyan** पर click करके **Subscribe** option पर click करें।

॥ श्रीहरिः ॥

जग मंगल गुनग्राम राम के।
दानि मुकुति धन धरम धाम के॥

गोस्वामी तुलसीदासजी महाराजद्वारा रचित यह चौपाई श्रीरामचरितमानसकी है। श्रीरामके नाम और कथा-प्रसंगकी महिमाका वर्णन करते हुए गोस्वामीजी कहते हैं कि भगवत्स्मरण सब प्रकारके सांसारिक सुख और आनन्दको देनेवाला तो है ही, यह भक्तोंके सर्वविध कल्याण—धर्म, अर्थ और मोक्षको भी प्रदान करता है।

घर-संसारकी आपाधापीमें फँसे जीवसे त्याग, तितिक्षा और कठोर साधनाकी अपेक्षा करना अव्यावहारिक-सा लगता है। गोस्वामीजीकी आश्वासन-भरी घोषणासे हिम्मत आती है कि भगवन्नाम और उनके गुणानुवादका आश्रय लेकर सबकी नैया पार हो सकती है।

प्रभुकृपाका सम्बल पाकर ही इस वर्षका यह अन्तिम अंक पाठकोंकी सेवामें सादर समर्पित है।

—सम्पादक

कल्याण

याद रखो—(१) भगवान् इच्छा करनेसे मिलते हैं। अवश्य ही वह इच्छा होनी चाहिये एकान्त और अनिवार्य आवश्यकताके रूपमें।

(२) भगवान् नित्य पूर्ण हैं, अतएव वे पूर्ण ही मिलते हैं।

(३) भगवान् मिलकर कभी बिछुड़ते नहीं, उनकी एक बारकी प्राप्ति सदाकी प्राप्ति होती है।

(४) भगवान्‌की प्राप्तिकी कामना और साधना इन्द्रियोंको संयमित तथा मनको शुद्ध करेगी। अतएव पाप नहीं होंगे।

(५) भगवान्‌को प्राप्त करनेकी साधनामें राग-द्वेष, वैर-विरोध, आशा-ममता आदि छूटेंगे, इससे साधन-कालमें ही मनमें शान्ति रहेगी।

(६) भगवान्‌को प्राप्त करनेकी कामना और साधना रहनेपर अन्तकालमें संसार छोड़ते समय दु:ख नहीं होगा।

(७) भगवान्‌को प्राप्त करनेकी कामना और साधना रहनेपर अन्तकालमें मन भगवान्‌में रहेगा और उसे सहज ही भगवान्‌का स्मरण होगा।

(८) अन्तकालमें भगवान्‌में मन रहते मरनेपर मरनेके अनन्तर निश्चितरूपसे भगवान्‌की ही प्राप्ति होगी।

याद रखो—(१) भोगोंकी प्राप्ति इच्छासे नहीं होती। कर्मसे होती है। धन, पुत्र, मान, अधिकारकी कौन इच्छा नहीं करता, पर वे नहीं मिलते। उनके लिये कर्मका बीज चाहिये। जैसा कर्मबीज होगा, वैसा ही फल मिलेगा।

(२) भोग सभी अपूर्ण हैं, इसलिये वे जब भी, जो भी मिलेंगे, अधूरे ही मिलेंगे; इससे कभी भी अभावका नाश नहीं होगा। अभाव ही दु:ख है।

(३) भोगका वियोग अवश्य ही होगा, चाहे पहले भोग समाप्त हो जायगा या पहले हम मर जायँगे।

(४) भोग-प्राप्तिकी कामना और साधनामें इन्द्रियोंका असंयम और मनकी अशुद्धि बढ़ेगी—नये-नये पाप अवश्य होंगे।

(५) भोग-प्राप्तिकी कामना और साधनामें राग-द्वेष, वैर-विरोध, आशा-ममता आदि बढ़ते ही रहेंगे, इससे मन सदा-सर्वदा अशान्त रहेगा।

(६) भोग प्राप्त करनेकी कामना-साधनामें मन लगा रहनेसे तथा भोगोंमें ममता होनेसे संसार छोड़ते समय अन्तकालमें महान् दु:ख होगा।

(७) भोग-प्राप्तिकी कामना तथा भोगोंमें ममता, आसक्ति रहनेसे अन्तकालमें मन किसी-न-किसी भोगमें ही रहेगा। भोगकी स्मृति ही निश्चित होगी।

(८) अन्तकालमें भोगमें मन रहते मरनेपर उसके अनुसार तथा जीवनभर भोग-कामनाओंसे प्रेरित होकर पाप-संचय करनेके कारण मरनेके बाद भीषण दु:खमय नरकोंकी तथा बार-बार नीच आसुरी योनियोंकी प्राप्ति होगी।

याद रखो—इच्छा करनेपर भगवान्‌की प्राप्ति निश्चित, सहज है और भोगोंकी प्राप्ति हजार इच्छा करनेपर भी सर्वथा अनिश्चित और बड़ी कठिन है। अवश्य ही वह इच्छा ऐसी होनी चाहिये, जिसकी पूर्ति दूसरी वस्तुसे न हो।

याद रखो—इन दोनोंमेंसे तुम किसी एकको अपने लिये चुन सकते हो। एकमें मानव-जीवनकी परम सफलता और जन्म-मृत्युके चक्रसे छूटकर नित्य परमानन्दकी प्राप्ति है। दूसरेमें मानव-जीवनकी सर्वथा विफलता और जन्म-मृत्युके चक्रमें भटकते हुए घोर दु:ख-यन्त्रणाओंकी प्राप्ति है।

याद रखो—जीवन बहुत थोड़ा है। मृत्यु किसी क्षण हो सकती है। विलम्बके लिये समय नहीं है। सफलता और परमानन्द मनुष्यका ध्येय होना ही चाहिये। अतएव उसीमें अपना जीवन लगाकर कृतकृत्य हो जाओ। **'शिव'**

आवरणचित्र-परिचय—

श्रीभगवान्द्वारा अर्जुनको कर्तव्यबोध

जब पाण्डव अपने वनवासकी अवधि समाप्त कर चुके, तो उनके पक्षके राजाओंने एक सभा की। उसमें बहुत सोच-विचारके बाद यह निश्चय हुआ कि पाण्डवोंने जिस उत्तम ढंगसे अपनी प्रतिज्ञाका पालन किया है, वह प्रशंसनीय है और अब उनका राज-पाट उन्हें मिलना चाहिये; क्योंकि वनवासकी अवधि पूरी हो गयी है। परंतु दुर्योधनसे राज-पाट वापस प्राप्त होनेकी आशा बहुत कम है, सम्भव है इसके लिये युद्ध करना पड़े, अतएव एक दूत तो कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर भेजा जाय और एक उन राजाओंके पास भेजा जाय जो किसी कारणवश सभामें उपस्थित नहीं हो सके हैं। उनसे यह भी निवेदन कर दिया जाय कि आवश्यकता पड़नेपर वे लोग पाण्डवोंका ही पक्ष लें और यथाशक्ति उनकी सहायता करें; क्योंकि वे धर्म तथा न्यायके लिये लड़ रहे हैं।

कौरवोंकी सभामें हस्तिनापुर जाने और इस झगड़ेके निबटानेका भार भगवान् श्रीकृष्णको सौंपा गया; क्योंकि यह सभी जानते थे कि इस कार्यको उनके अतिरिक्त अन्य कोई भी करनेमें समर्थ नहीं है। जब श्रीकृष्ण कौरवोंकी राजसभामें पहुँचे, तो उन्होंने कौरवोंको अनेक प्रकारसे समझाया और पाण्डवोंको केवल इन्द्रप्रस्थ, वृकप्रस्थ, जयंत, वारणावत तथा एक अन्य गाँव, जो उचित समझें, देनेका प्रस्ताव रखा। दुर्योधन, जो बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था, समझ गया कि इन गाँवोंके माँगनेसे यह अभिप्राय है कि कौरव सदैव पाण्डवोंके आश्रित रहें और वैमनस्यका भी अन्त न हो; क्योंकि ये चारों स्थान कौरवराज्यकी सीमा बन जायँगे और पाण्डवोंको अपने प्रति किये गये व्यवहारकी सदा स्मृति दिलाते रहेंगे। अतएव दुर्योधनने इस प्रस्तावको अस्वीकार करते हुए श्रीकृष्णको स्पष्ट उत्तर दे दिया कि इन गाँवोंकी तो क्या, मैं सूईकी नोंकके बराबर भी भूमि बिना युद्धके न दूँगा। यदि कुछ बाहुबलका भरोसा हो तो रणभूमिमें भाग्यकी परीक्षा कर लें।

श्रीकृष्ण असफल हो वहाँसे लौट आये और दोनों ओरसे खुल्लमखुल्ला युद्धकी तैयारी होने लगी। कौरवोंकी ग्यारह अक्षौहिणी और पाण्डवोंकी सात अक्षौहिणी सेना कुरुक्षेत्रके लम्बे-चौड़े मैदानमें आ उतरी। श्रीकृष्ण अर्जुनके रथवान् बने। उन्होंने अर्जुनके रथको उस समय विपक्षी सेनाका अनुमान लगानेके अभिप्रायसे बीचमें ले जाकर खड़ा कर दिया। जब अर्जुनने रणभूमिमें युद्ध करनेकी इच्छासे एकत्रित अपने मामा, चाचा, दादा, गुरु, मित्र और भाई आदि सम्बन्धियोंको देखा तो उसे आत्मग्लानि हुई और उसने श्रीकृष्णसे कहा—'मुझे ऐसी विजयकी कामना नहीं है, जिसे अपने सम्बन्धियोंके खून बहाकर प्राप्त किया जाय, मैं नहीं लड़ूँगा, आप मेरे रथ यहाँसे ले चलिये।' जब श्रीकृष्णने अर्जुनकी ऐसी दशा देखी तो सोचा कि यह तो बना-बनाया काम बिगड़ा जा रहा है। अतः वे अर्जुनको समझाने लगे—

'वीरश्रेष्ठ अर्जुन! प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि वह अपना कर्तव्य-पालन करे। कर्तव्य-पथसे एक पग भी इधर-उधर होना उचित नहीं है, कर्तव्य-पालन करते समय हानि-लाभ और जीवन-मरणका विचारतक मनमें नहीं आने देना चाहिये। हमारा कर्तव्य केवल कर्म करना है। फल परमात्माके हाथ है। जिस प्रकार हम पुराने वस्त्रोंको उतारकर नये वस्त्र पहन लेते हैं, उसी प्रकार यह मिट्टीका चोला शरीर बार-बार बदलता रहता है। आत्मा तो अमर है, उसे न तो कोई शस्त्र काट सकता है, न आग जला सकती है, न जल गला सकता है और न पवन सुखा सकता है। अर्जुन! तुम क्षत्रिय हो और इस समय युद्धक्षेत्रमें खड़े हो। तुम्हारा कर्तव्य धर्मयुद्ध करना है। सच्चे शूरमाओंकी तरह विजय पाओगे तो राज्य-सुख भोगोगे और रणमें वीरगतिको प्राप्त होनेपर स्वर्गके अधिकारी बन जाओगे। अब सब प्रकारकी चिन्ताएँ, शंकाएँ और संशय मनसे निकाल डालो। उठो और पुरुषसिंहकी भाँति अपना कर्तव्य-पालन करो।'

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः॥

गीताके इस उपदेशका अर्जुनपर आश्चर्यजनक प्रभाव पड़ा और वह युद्ध करनेके लिये तैयार हो गया।

अनमोल वचन—

महापुरुषोंकी महिमा

(ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका)

❀ जिस मनुष्यने संसारमें मान-बड़ाई और प्रतिष्ठाका त्याग कर दिया, वही महात्मा है और वही देवता और ऋषियोंद्वारा भी पूजनीय है। साधु और महात्मा तो बहुत लोग कहलाते हैं, किंतु उनमें मान-बड़ाई और प्रतिष्ठाका त्याग करनेवाला कोई विरला ही होता है।

❀ जैसे एक व्यापारी अपनी दुकानका माल तौल-तौलकर ग्राहकोंको देता है—अन्दाजसे नहीं। इसी प्रकार महापुरुषकी वाणीका प्रत्येक शब्द उसके हृदयरूपी तराजूपर तुल-तुलकर आता है। उनके वाक्य अमूल्य होते हैं, उनकी क्रियाएँ अमूल्य होती हैं और उनका भजन अमूल्य होता है। उनके मन, वाणी और शरीरके प्रत्येक कार्य महत्त्वपूर्ण और तात्त्विक होते हैं। उनकी मौन—अक्रिय-अवस्थामें भी विश्वकल्याणका उपदेश भरा रहता है। अत: उनका भाषण, स्पर्श, दर्शन, कर्म, ध्यान और यहाँतक कि उनकी छुई हुई वस्तु भी पवित्र समझी जाती है। भगवान्‌ने ऐसे ही महापुरुषोंका अनुकरण करना बतलाया है।

❀ तीर्थोंका तीर्थत्व सन्तों और प्रभुके संगसे ही माना जाता है। जहाँ भगवान्‌ने वास किया अथवा महापुरुषोंने तपस्या की, वही स्थान तीर्थ बन गया। कपिलायतन और भारद्वाज-आश्रमके दर्शनार्थ लोग इसीलिये जाते हैं कि वहाँ कपिल और भारद्वाजने तपस्या की थी। पंचवटी और चित्रकूटकी पवित्रता भगवान् श्रीरामचन्द्रजीके वहाँ निवास करनेके कारण ही मान्य है। नर-नारायणकी तपोभूमि होनेके कारण ही बदरिकाश्रमके दर्शनार्थ लोग कठिन कष्ट सहकर भी जाते हैं। पुलको वानर-सेनाने बनाया था, इसीसे आज सेतुबन्ध-रामेश्वरके पाषाणखण्डोंको लोग पूज्य मानते हैं। भक्त जो क्रिया कर जाते हैं, वह लाखों वर्षोंके बाद भी पूजित होती है। नैमिषारण्यमें सन्त एकत्र होकर हरि-चर्चा किया करते थे, इसीसे वह स्थान तीर्थ माना जाता है। अवध और सरयूकी महिमाका प्रधान कारण श्रीरामावतार ही है। मथुरा, गोकुल और वृन्दावन आदि तीर्थ श्रीकृष्णावतारके कारण ही इतने अधिक मान्य और पूजित हैं। संसारमें जितने भी तीर्थ और देवस्थान हैं, उन सबकी महिमाके प्रधान कारण भगवान् और उनके भक्त ही हैं।

❀ वेद, उपनिषद्, इतिहास, पुराण सभी शास्त्रोंमें स्थान-स्थानपर महापुरुषोंकी महिमाका एक स्वरसे गान किया गया है। फिर परमात्माकी गुणगरिमाकी तो बात ही क्या है! उनकी महिमाका जितना भी गान किया जाय, सभी थोड़ा है। महात्माओंकी अथवा वैभव-सम्पन्न सांसारिक लोगोंकी जो कुछ भी बड़ी-से-बड़ी महिमा हमारे देखने-सुननेमें आती है, वह सब वास्तवमें भगवान्‌की ही महिमा है।

❀ महात्मा पुरुषोंका मन और उनकी इन्द्रियाँ जीती हुई होनेके कारण न्यायविरुद्ध विषयोंमें तो उनकी कभी प्रवृत्ति ही नहीं होती। वस्तुत: ऐसे महात्माओंकी दृष्टिमें एक सच्चिदानन्दघन वासुदेवसे भिन्न कुछ भी नहीं होनेके कारण यह सब भी लीलामात्र ही है, तथापि लोकदृष्टिमें भी उनके मन, वाणी, शरीरसे होनेवाले आचरण परम पवित्र और लोकहितकर ही होते हैं। कामना, आसक्ति और अभिमानसे रहित होनेके कारण उनके मन और इन्द्रियोंद्वारा किया हुआ कोई भी कर्म अपवित्र या लोकहानिकर नहीं हो सकता। इसीसे वे संसारमें प्रमाणस्वरूप माने जाते हैं।

❀ जैसे मूर्ख रोगी स्वादके वश हुआ कुपथ्य करके मर जाता है, वैसे ही कामी पुरुष स्त्रीका अनुचित सेवन करके अपना नाश कर डालता है। विलासिताकी बुद्धिसे स्त्रीका सेवन करनेसे कामोद्दीपन होता है और कामका वेग बढ़नेसे बुद्धिका नाश हो जाता है, कामसे मोहित हुआ नष्टबुद्धि पुरुष चाहे जैसा विपरीत आचरण कर बैठता है, जिससे उसका सर्वथा अध:पतन हो जाता है। स्त्रीके सेवनसे बल, वीर्य, बुद्धि, तेज, उत्साह, स्मृति और सद्‌गुणोंका नाश हो जाता है एवं शरीरमें अनेक प्रकारके रोगोंकी वृद्धि होकर मनुष्य मृत्युके समीप पहुँच जाता है; तथा इस लोकके सुख, कीर्ति और धर्मको खोकर नरकमें गिर पड़ता है। यही आत्माका पतन है।

सन्त-तत्त्व-विवेचन

(साधुवेषमें एक पथिक)

सन्तका दर्शन-मनन सत्यका दर्शन-मनन है। सन्तकी उपासना सत्यकी उपासना है। सन्तकी स्तुति सत्यकी स्तुति है। जिस मानवी मूर्तिमें उच्चतम ज्ञानके साथ उत्कृष्ट प्रेम और निर्लिप्तता, निर्द्वन्द्वता, निर्भयता तथा स्थिर शान्तिका दर्शन मिलता है, वही सन्त है। सन्त वही है, जिसके शरीर, वाणी और मनमें पुण्य-पवित्रता प्रकाशित रहती है; सन्त नित्य प्रसन्न और आत्मतृप्त रहता है। उसके अन्त:करणमें किसी भी प्रकारकी भोगलालसा नहीं उत्पन्न होती। क्षमा, दया, उदारता, वैराग्य, विवेक, शम, दम, तितिक्षा, सरलता, परोपकारिता, निरभिमानता ही उसकी सम्पत्ति है। सन्त सभी अवस्थाओं, परिस्थितियोंसे ऊपर उठकर प्राणिमात्रसे प्रेम करता है। सन्त संसारको सत्य अथवा महत्तम गुण-ऐश्वर्यका ज्ञान कराता है; वह परमेश्वरके कृपा-अवतरणका पवित्रतम माध्यम है। सन्त-चरित्रका अध्ययन करते समय सावधानीके साथ अपना दृष्टिकोण ठीक रखना चाहिये; ऐसा करनेसे उचित प्रेरणा और प्रकाश लेनेमें भूल नहीं होती है। सन्त-चरित्रकी महत्ता किसी प्रकारकी आधिभौतिक सफलता अथवा उसके द्वारा नव रहस्य-निर्माणके कारण नहीं है, यह तो सत्य-आधार तथा परम शान्तिकी खोजमें सद्गुणोंके उच्चतम विकास तथा आत्माको पूर्ण बनानेवाली प्रगतिसे प्रकट होती है।

सन्तमें असाधारण त्याग, ज्ञान और प्रेमके कारण ही अलौकिक सौन्दर्य होता है। यह दिव्य सौन्दर्य प्रत्येक प्राणीको अपनी ओर आकृष्ट करता है। इस दिव्यताके कारण ही सन्तकी समीपतामें अनिर्वचनीय शक्तिका अनुभव होता है। संसारमें सर्वसाधारण जीव अपने ही सुखकी प्राप्तिके लिये जन्म लेते रहते हैं, पर दूसरेके हितके लिये सन्त ही तत्पर रहता है। वह जगत्के कल्याणके लिये ही जन्म लेता है; वह जगत्में आकर माया, अभिमान और मोहसे बचकर अपने आध्यात्मिक उत्थान और जगत्के कल्याणके लिये पवित्र अनुष्ठानमें लगा रहता है। सन्त अपने व्यक्तित्वकी संकीर्ण परिधि पारकर सर्वात्मा—विश्वात्मासे अभिन्न परमात्मामय होनेकी साधना करता है और अन्तमें इसीमें सिद्धि देखी जाती है।

वास्तवमें उच्च कोटिके सन्तोंकी सत्य-अनुभूति एक-सी होती है, पर प्रत्येक सन्तकी रहनीमें अपना वैशिष्ट्य होता है।

मानव-समाजके संचित पुण्यसे सन्त साकार रूपसे जन्म लेते हैं और समाजके पापकी अधिकतासे क्रूरकर्मी दुष्ट पैदा होता है। सन्त मानवसमाजको पापसे पुण्य, परतन्त्रतासे स्वतन्त्रता, असत्से सत्य और विषयासक्तिसे विरक्तिकी ओर बढ़नेकी प्रेरणा प्रदान करता है। वह पूर्ण परात्पर परमानन्द-तत्त्वका पवित्र तथा कल्याणकारी सन्देश देता है। सन्त योगस्थ होनेका साधन प्रकाशित करता है; निस्सन्देह उसकी समीपता बड़े ही सौभाग्यकी परिचायक है, दैवी वरदान है। प्रबल आध्यात्मिक सामर्थ्य रखनेवाले प्रशान्तचित्त तथा स्थिरबुद्धिवाले सन्तका ध्यान करनेसे अद्भुत शक्ति प्राप्त होती है। जिस प्रकार किसी शक्तिसम्पन्न पदार्थसे दूसरे पदार्थका सम्बन्ध होते ही उसमें भी वही शक्ति आ जाती है, उसी प्रकार शक्तिसम्पन्न सन्तका ध्यान करनेसे—मानसिक योग होनेसे उसकी शक्ति निरन्तर मिलती रहती है। सन्तके साथ तो उस समय भी ध्यानद्वारा सम्पर्क हो जाता है, जब किसी बहुत बड़े दु:खके दूर हो जानेकी सन्तसे आशा होती है; प्रगाढ़ प्रीतिकी अवस्थामें भी सन्तसे ध्यानयोग दृढ़ होता है।

सिद्ध सन्तके द्वारा ही संसारमें मानव-जातिको अपने भीतर ईश्वरीय ज्ञान तथा प्रेमकी अभिव्यक्तिका सन्देश सुलभ होता है। सन्तकी ही प्रेरणासे दिव्यताकी प्राप्तिके लिये मानवता जाग्रत् होकर सत्योन्मुख होती रहती है। सिद्ध सन्तमें ही भगवान्का उच्चतम स्वभाव व्यक्त होता है। उसमें अलौकिक दया, उदारता और अनुकम्पा होती है। सन्तका ज्ञानमय जीवन विश्वकी स्वार्थहीन—निष्काम सेवाके लिये होता है। सन्त ईश्वर-भक्ति—आत्मसमर्पण अथवा परमात्मामें अहंको लीन रखने या सत्यसे अभिन्न हो जानेकी शिक्षा देता है। सन्त-जीवन संसारमें भगवान्की दिव्य विभूति है। उसका जीवन बुद्धि, ज्ञान और अनुभवसे संचालित होता है—इन्द्रियोंका उसमें प्रवेश ही नहीं है। सन्त अपने लिये स्वयं ही शास्त्र है; क्योंकि वह अहंता-ममताका त्याग कर देता है। शास्त्रीय नियन्त्रणके लिये सन्तमें कुछ रह ही नहीं जाता है। भगवान्की प्रीतिके लिये शास्त्रसम्मत सदाचरण उसका स्वभाव हो जाता है। सन्त असंग—नितान्त संगातीत रहता है।

महाभारतमें अधर्म और धर्मका युद्ध

(नित्यलीलालीन श्रद्धेय भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार)

महाभारतके आदिपर्वमें दो श्लोक मिलते हैं—

दुर्योधनो मन्युमयो महाद्रुमः
स्कन्धः कर्णः शकुनिस्तस्य शाखाः।
दुःशासनः पुष्पफले समृद्धे
मूलं राजा धृतराष्ट्रोऽमनीषी॥
युधिष्ठिरो धर्ममयो महाद्रुमः
स्कन्धोऽर्जुनो भीमसेनोऽस्य शाखाः।
माद्रीसुतौ पुष्पफले समृद्धे
मूलं कृष्णो ब्रह्म च ब्राह्मणाश्च॥

(अ० १। ११०-१११)

महाभारत ग्रन्थके मुख्य कथानकका केन्द्र महाभारत-युद्ध ही है। उसमें दो विरोधी शक्तियोंका प्रबल संघर्ष दृष्टिगोचर होता है। एक ओर तो अधर्म अपने पूरे दल-बलके साथ मुँह बाये खड़ा है और धर्म एवं उसके परिवारको निगल जाना चाहता है। दूसरी ओर धर्म अपनी सारी शक्ति लगाकर अधर्मको दबा देना चाहता है। इन्हीं दोनों शक्तियोंको यहाँ दो वृक्षोंके रूपमें व्यक्त किया गया है। एकके प्रतीक क्रोध एवं अभिमानकी मूर्ति, साक्षात् कलियुगके अवतार राजा दुर्योधन हैं। दुर्योधन न होते तो महाभारतका संहारकारी युद्ध कदापि न होता और भरतवंशका इतिहास दूसरी ही तरह लिखा जाता। दुर्योधनके प्रधान सहायक महारथी कर्ण थे। इन्हींके बलपर दुर्योधन नाचते थे। ये ही न्याय-अन्याय सबमें उनका समर्थन करते थे और उनके प्रत्येक पापपूर्ण प्रस्तावका अनुमोदन करते थे। ये ही उनके प्रधान सलाहकार थे। इन्हींके पराक्रम एवं अस्त्र-कौशलका उन्हें भरोसा था। महाबली अर्जुनको वे इन्हींसे लड़ाकर जीतनेकी आशा रखते थे। भीष्म और द्रोणाचार्यको तो वे पाण्डवोंका पक्षपाती समझते थे। इसीलिये कर्णको इस अधर्ममय वृक्षका स्कन्ध (तना) बताया गया। वृक्षका विस्तार उसकी शाखाओंद्वारा होता है। दुर्योधनकी पापपूर्ण नीतिको कार्यरूपमें परिणतकर उसका विस्तार करना शकुनिका ही काम था। उन्होंने दुर्योधनको द्यूत आदि पाप-कर्मके लिये प्रेरित एवं उत्साहितकर युधिष्ठिरको कपटसे जीतनेका सफल आयोजन किया था। इसीसे उन्हें दुर्योधनरूप वृक्षकी शाखा कहा गया है। वृक्षका परिपाक पुष्प-फलके रूपमें ही होता है। दुर्योधनकी नीतिका परिपाक भी द्रौपदी-चीरहरण आदिके रूपमें दुःशासनके द्वारा ही हुआ था, इसीसे उन्हें पुष्प-फल बताया गया। अधर्मका मूल अज्ञान है। धृतराष्ट्र अज्ञान एवं मोहकी साक्षात् मूर्ति थे। वे दुर्योधनकी काली करतूतोंका भयंकर परिणाम जानते हुए भी उन्हें कमजोरीके कारण रोक नहीं सकते थे और उनके प्रत्येक कार्यमें अनुमति दे दिया करते थे। दुर्योधनके पिता होनेके नाते भी इन्हें अधर्मरूपी वृक्षका मूल कहना सर्वथा संगत ही है। दुर्योधन जन्मते ही गधेकी भाँति रेंकने लगे थे और उनके जन्मके समय कई अनिष्टसूचक उत्पात भी हुए। इससे उनके द्वारा कुरुकुलके नाशकी सूचना मिली थी। उस समय विदुरने धृतराष्ट्रको इन्हें परित्याग करके कुलको सर्वनाशसे बचानेकी सलाह दी थी। उस समय धृतराष्ट्र इनका परित्याग कर देते तो इतने खून-खराबेकी नौबत ही नहीं आती। वृक्षकी जड़को काट देनेपर उसका अस्तित्व ही नहीं रहता। इस दृष्टिसे भी धृतराष्ट्रको मूल कहना उपयुक्त ही है।

इधर धर्मके प्रतीक महाराज युधिष्ठिर थे। वे साक्षात् धर्मकी मूर्ति ही थे। उनके प्रधान बल वीरवर अर्जुन थे। भीमके द्वारा इनकी धर्मपूर्ण नीतिका विस्तार होता था। नकुल-सहदेवके द्वारा उसका परिपाक होता था, और इस धर्मरूपी वृक्षकी जड़ भगवान् श्रीकृष्ण, वेद और ब्राह्मण थे। इन्हींके आधारपर यह धर्म-वृक्ष टिका रहा। इस प्रकार इन दो श्लोकोंमें महाभारत-युद्धके तात्पर्यका दिग्दर्शन कराया गया है।

सत्संग सन्तोंके संग—

प्रेम-तत्त्व

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज)

❀ जो भक्ति भगवान्‌के गुण, प्रभाव और ऐश्वर्यको लेकर की जाती है, वह भी वास्तविक नहीं है। वह साधन-भक्ति है। प्रेम तो वह है, जो ईश्वरके साथ सम्बन्धसे होता है, जो उनको अपना माननेसे होता है। वे चाहे जैसे हों, मुझसे प्रेम करें या न करें, दयालु हों चाहे निष्ठुर हों, परंतु मेरे हैं—इस भावसे ही सच्चा प्रेम होता है।

❀ जो साधक भगवान्‌को अपना लेता है, उनसे प्रेम करना चाहता है, वह कैसा है—महान् दुराचारी है या सदाचारी, उच्च वर्णका है या नीच वर्णका—इसका भगवान् जरा भी विचार नहीं करते। जो उनको चाहता है, उनके साथ प्रेम करना चाहता है, वे उससे प्रेम करनेके लिये सदैव उत्सुक रहते हैं। साधक उनसे जितना प्रेम करता है, वे उससे कितना अधिक प्रेम करते हैं—इसका वाणीद्वारा कोई वर्णन नहीं कर सकता।

❀ यदि प्रेमकी इच्छा रहते हुए भी सचमुच प्रेम प्राप्त नहीं हुआ, तो उसके न मिलनेकी गहरी वेदना होनी चाहिये। वह वेदना अवश्य ही प्रेम चाहनेवालेको प्रेमकी प्राप्ति करा देगी। यदि प्रेमकी चाह है, परंतु उसके प्राप्त न होनेकी तीव्र वेदना नहीं है, तो साधकको समझना चाहिये कि मेरे जीवनमें किसी-न-किसी प्रकारका अन्य रस है, जो मुझे प्रेमसे वंचित करनेवाला है।

❀ प्रेम चाहनेवालेके मनमें भोगवासना और भोगोंका रस तो पहले ही मिट जाना चाहिये। जबतक भोगोंमें रस प्रतीत होता है, तबतक तो प्रेमकी सच्ची चाह ही नहीं होती।

❀ भगवत्प्रेमका मूल्य सद्‌गुण या सदाचार नहीं है। अतः उस प्रेममें प्रत्येक मनुष्यका अधिकार है। पतित-से-पतित भी भगवान्‌का प्रेम प्राप्त कर सकता है; क्योंकि जिस प्रकार भक्तवत्सल होनेके नाते श्रीहरि अपने भक्तसे स्नेह करते हैं, वैसे ही वे पतितपावन प्रभु अधमोद्धारक और दीनबन्धु भी तो हैं ही। अतः दीन, हीन और पतितसे भी वे प्यार करते हैं। उसे भी वे अपने प्रेमका पात्र समझते हैं।

❀ प्रभु मनुष्यसे किसी सौन्दर्य या गुणके कारण प्रेम नहीं करते; क्योंकि अनन्त दिव्य सौन्दर्य, अनन्त दिव्य सद्‌गुणोंके वे केन्द्र हैं। किसी ऐश्वर्यके कारण प्रभु प्रेम करते हों, ऐसी बात भी नहीं है; क्योंकि उनके समान ऐश्वर्य किसीके पास है ही नहीं, तो उनसे अधिक ऐश्वर्य हो ही कैसे सकता है। वे तो एकमात्र उसीसे प्रेम करते हैं, जो उनपर विश्वास करके यह मान लेता है कि मैं उनका हूँ, वे मेरे हैं। बस, इसके अतिरिक्त भगवान् और कुछ नहीं चाहते, इसलिये प्रत्येक मनुष्य उनके प्रेमका अधिकारी है।

❀ प्रेम प्रदान करना या न करना प्रभुके हाथकी बात है। वे जब चाहें, जिसको चाहें, अपना प्रेम प्रदान करें अथवा न करें, इसमें साधकके वशकी बात नहीं है; किंतु उनका प्रेम न मिलनेसे व्याकुलता और बेचैनी तो होनी ही चाहिये।

❀ छोटी-से-छोटी चाह पूरी न होनेसे मनुष्य दुखी हो जाता है, व्याकुल हो जाता है। फिर जिसकी भगवान्‌के प्रेमकी चाह है और प्रेम मिलता नहीं, वह चैनसे कैसे रह सकता है? उसकी वेदनाको किसी भी भोगका, सद्‌गुणका और सदाचारका अथवा सद्‌गतिका सुख भी कैसे शान्त कर सकता है?

❀ प्रेमी भगवान्‌को रस देनेके लिये ही अपना जीवन सुन्दर बनाते हैं, जैसे सुन्दर पुष्पको खिला हुआ देखकर वाटिकाका स्वामी उस फूलसे प्रेम करता है, उसको हाथमें लेता है, सूँघता है, उसकी शोभाको देखकर प्रसन्न होता है; वैसे ही भगवान् भी अपने प्रेमीको चाहरहित सुन्दर जीवनयुक्त देखकर प्रसन्न होते हैं, उनको उससे रस मिलता है।

गीतोक्त श्लोकोंके अनुष्ठानकी विधि

(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)

श्लोका मन्त्रमया: प्रोक्ता: सर्वे च सिद्धिदायका:।
अभीष्टकार्यसिद्ध्यर्थं विधिस्तेषां निगद्यते॥

श्रीमद्भगवद्गीताके जिस श्लोकको सिद्ध करना हो, उसका सम्पुट लगाकर पूरी गीताका पाठ करना चाहिये। जैसे, हमें '**कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव:..... शाधि मां त्वां प्रपन्नम्**' (२।७)—इस श्लोकको सिद्ध करना हो तो पहले इस श्लोकका एक बार पाठ करके फिर '**धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे.....**' (१।१)—इस श्लोकका पाठ करें। फिर '**कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव:.....**' श्लोकका पुन: पाठ करके '**दृष्ट्वा तु.....**' (१।२)—इस श्लोकका पाठ करें। इस तरह प्रत्येक श्लोकके पहले और पीछे सम्पुट लगाकर पूरी गीताका पाठ करें तो उपर्युक्त श्लोक (मन्त्र) सिद्ध हो जायगा।

सम्पुटसे भी सम्पुटवल्ली लगाकर गीताका पाठ करना बहुत बढ़िया है।[1] जैसे, हमें '**कार्पण्य-दोषोपहतस्वभाव:.....**' श्लोक सिद्ध करना हो तो पहले इस श्लोकका दो बार पाठ करके फिर '**धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे.....**' श्लोकका पाठ करें। फिर सम्पुटवल्लीवाले श्लोकका दो बार पाठ करके '**दृष्ट्वा तु.....**' श्लोकका पाठ करें। इस तरह पूरी गीताका पाठ करके अभीष्ट श्लोकको सिद्ध कर लें।[2]

अभीष्ट कार्यकी सिद्धिके लिये उपर्युक्त प्रकारसे सिद्ध किये हुए मन्त्रका जप गंगाजीके जलमें खड़े होकर करना चाहिये। ऐसा न कर सकें, तो गंगाजीके जलमें पत्थरोंका आसन बनाकर उसपर ऊनका आसन बिछाकर, बैठकर जप करना चाहिये। यह भी न कर सके तो गंगाजीके किनारेपर बालूमें अपना ऊनी आसन बिछाकर मन्त्रका जप करना चाहिये। अगर गंगाजीका सान्निध्य उपलब्ध न हो तो अपने घरमें ही किसी एकान्त कमरेमें गोबर और गोमूत्रको पानीमें मिलाकर आसन लगानेके स्थानपर लीप दें और उसपर अपना ऊनी आसन बिछाकर, बैठकर मन्त्रका जप करें।

गीतोक्त सिद्ध मन्त्रोंका निम्नलिखित कार्योंमें प्रयोग किया जा सकता है—

(१) कोई बात भगवान्‌से पूछनी हो, किसी समस्याका समाधान पाना हो, 'मैं ज्ञानमार्गमें चलूँ या भक्तिमार्गमें'—इस उलझनको मिटाना हो तो रात्रिके समय एकान्त कमरेमें आसन बिछाकर बैठ जायँ। कमरेकी बत्ती बुझा दें। केवल एक अगरबत्ती जलाकर रखें। अँधेरेमें चमकती हुई उस अगरबत्तीपर अपनी दृष्टि रखें और भगवान्‌का ध्यान करें भगवान् मेरे सामने खड़े हैं और मैं अर्जुन भगवान्‌से पूछ

रहा हूँ—ऐसा भाव रखकर '**कार्पण्यदोषोपहतस्वभाव: पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेता:। यच्छ्रेय: स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥**' (२।७)—इस श्लोकका पाठ करें और साथमें अर्थका भी चिन्तन करते रहें। पाठ करते-करते श्लोकके जिस चरणमें अथवा जिन पदोंमें मन लग जाय, उसीका पाठ करना शुरू कर दें, जैसे—'**पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेता:**; '**पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेता:**' अथवा '**निश्चितं ब्रूहि तन्मे; निश्चितं ब्रूहि तन्मे**' या '**शाधि मां त्वां प्रपन्नम्; शाधि मां त्वां प्रपन्नम्**' आदि किसी एककी बार-बार आवृत्ति करते रहें इस तरह पाठ करते हुए नींद आने लगे तो पाठ करते हुए

१-सिद्ध किये जानेवाले श्लोकका गीताके प्रत्येक श्लोकसे पहले और पीछे एक बार पाठ करना 'सम्पुट पाठ' और दो बार पाठ करना 'सम्पुटवल्ली पाठ' कहलाता है।

२-मन्त्रको किसी कारणसे सिद्ध न कर सकें और अभीष्ट कार्य सिद्ध करनेकी तीव्र उत्कण्ठा हो तो बिना सिद्ध किये मन्त्रका जप करनेसे

ही सो जायँ। ऐसा करनेसे स्वप्नमें भगवान्‌का संकेत मिलता है। उस संकेतसे समझ लेना चाहिये कि भगवान्‌का अमुक भाव है। अगर संकेत समझमें न आये तो दूसरे दिन पुनः रात्रिमें उपर्युक्त विधिसे पाठ करें और भगवान्‌से प्रार्थना करें कि महाराज! आप लिखकर बतायें। ऐसा करनेसे स्वप्नमें लिखकर सामने आ जायगा। लिखा हुआ भी समझमें न आये तो दूसरे दिन पुनः रात्रिमें उपर्युक्त विधिसे पाठ करें और भगवान्‌से प्रार्थना करें कि प्रभो! आप कहकर बतायें। ऐसा करनेसे स्वप्नमें आवाज आ जायगी और आवाजके साथ ही हमारी नींद खुल जायगी।

अगर एक रातमें ऐसा स्वप्न न आये, तो जबतक स्वप्न न आये, तबतक उपर्युक्त विधिसे प्रतिदिन रातमें श्लोकका पाठ करते रहें। ग्यारह अथवा इक्कीस दिनतक पाठ किया जा सकता है। इसमें जितनी तेज लगन होगी, उतना ही जल्दी काम होगा।

(२) मनमें दो बातोंकी उलझन हो और उनका समाधान पाना हो तो उपर्युक्त विधिसे ही '**व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे। तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम्॥**' (३। २)—इस श्लोकका पाठ करना चाहिये।

(३) भूत-प्रेतकी बाधाको दूर करना हो तो '**स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च। रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः॥**' (११। ३६)—इस मन्त्रको पहली कही गयी विधिसे सिद्ध कर लेना चाहिये। फिर जिस व्यक्तिको भूत-प्रेतने पकड़ा है, उसको इस मन्त्रका पाठ करते हुए मोरपंखसे झाड़ा दें अथवा अपने हाथमें शुद्ध जलसे भरा हुआ लोटा ले ले और इस मन्त्रको बोलकर जलमें फूँक मारते रहें, फिर वह जल उस व्यक्तिको पिला दें। इन दोनों प्रयोगोंमें इस मन्त्रका सात, इक्कीस या एक सौ आठ बार पाठ कर सकते हैं। इस मन्त्रको भोजपत्र या सफेद कागजपर अनारकी कलमके द्वारा अष्टगन्धसे लिखें और ताबीजमें डालकर रोगीके गलेमें लाल धागेसे पहना दें।

(४) शास्त्रार्थमें, वाद-विवादमें विजय पानेके लिये '**यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः। तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥**' (१८। ७८)—इस मन्त्रका जप करना चाहिये।

(५) सब जगह भगवद्भाव करनेके लिये सातवें अध्यायके सातवें अथवा उन्नीसवें श्लोकका पाठ करना चाहिये।

(६) भगवान्‌की भक्ति प्राप्त करनेके लिये नवें अध्यायका चौंतीसवाँ, ग्यारहवें अध्यायका चौवनवाँ अथवा पचपनवाँ, बारहवें अध्यायका आठवाँ और अठारहवें अध्यायका छाछठवाँ—इनमेंसे किसी एक श्लोकका पाठ करना चाहिये।

इस तरह जिस कार्यके लिये जो श्लोक ठीक मालूम दे, उसीका पाठ करते रहें तो कार्य सिद्ध हो जायगा। अगर वह श्लोक अर्जुनका हो तो अपनेमें अर्जुनका भाव लाकर भगवान्‌से प्रार्थना करें; और भगवान्‌का श्लोक हो तो 'भगवान् मेरेसे कह रहे हैं'—ऐसा भाव रखते हुए पाठ करें। गीताके श्लोकोंपर जितना अधिक श्रद्धा-विश्वास होगा, उतना ही जल्दी काम सिद्ध होगा।

बोध-कथा—

समय नहीं है

बंगालमें एक बड़े धनी सेठ थे। उनके यहाँ एक ग्वालिन आयी। सूर्य अस्त होनेमें समय कम था। वह बोली—पैसा देन (पैसा दीजिये)। उसके मुनीमने कहा—'थोड़ी देर ठहरो।' ग्वालिन बोली—'आर बेला नाय (समय नहीं है)।' मुनीमने कहा—'थोड़ा ठहरो!' उसने फिर कहा—'आर बेला नाय।' तीन बार उस स्त्रीने कहा—'सूर्य डूब रहा है, समय नहीं है।' सेठने उसको पैसा दिलवा दिया और उसी समय सबका हिसाब नक्की करके चल पड़ा। बोला—'समय नहीं है। हमारा सूर्य अस्ताचलमें जा रहा है।' उस सेठको ग्वालिनका इतना ही उपदेश लग गया और प्रभुके शरण होकर वह महान् भक्त हो गया।

हमारा भी यही हाल है, समय कहाँ है? भगवान् कहते हैं—' अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम्।' **(गीता ९। ३३)। इसलिये तू सुखरहित और क्षणभंगुर इस मनुष्य-शरीरको प्राप्त होकर निरन्तर मेरा ही भजन कर।**

श्रीराधा-माधव—कहिअत भिन्न न भिन्न

(अनन्तश्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकाशारदापीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज*)

सनातन वैदिकचिन्तनके अनुसार भगवान् यदि आनन्दस्वरूप हैं, तो भक्तिस्वरूपा भगवती प्रेमस्वरूपा हैं, दोनोंमें अभेद है। जिस प्रकार राम, विष्णु, शिव, श्रीकृष्ण सभी आनन्दस्वरूप हैं, उसी प्रकार भगवती सीता, लक्ष्मी, पार्वती और राधा प्रेमस्वरूपा हैं। उपासनाकी जहाँतक बात है, दोनोंकी एक साथ अथवा किसी एककी उपासना भी शास्त्रविहित है, क्योंकि व्यावहारिक सत्तामें वे पृथक्-पृथक् भले दीखें, किंतु परमार्थत: एक ही हैं। सामरहस्योपनिषद्में कहा गया है कि—

अनादिरयं पुरुष एक एवास्ति। तदेव रूपं द्विधा विधाय समाराधनतत्परोऽभूत्। तस्मात् तां राधां रसिकानन्दां वेदविदो वदन्ति॥

ब्रह्मवैवर्तपुराणमें भगवान्का वचन है कि हे राधे! मुझमें-तुझमें जो नराधम भेद करता है, वह ***यावच्चन्द्रदिवाकरौ*** कालसूत्र नामक नरकमें रहेगा; क्योंकि श्रीराधा और भगवान् श्रीकृष्णके रूपमें एक ही ज्योति दो प्रकारसे प्रकट है—

य: कृष्ण: सापि राधा च या राधा कृष्ण एव स:।
एकं ज्योतिर्द्विधा भिन्नं राधामाधवरूपकम्॥
राधा कृष्णात्मिका नित्यं कृष्णो राधात्मको ध्रुवम्।
वृन्दावनेश्वरी राधा राधैवाराध्यते मया॥

(ब्रह्माण्डपुराण)

येयं राधा यश्च कृष्णो रसाब्धिर्देहश्चैक: क्रीडनार्थं द्विधाभूत्।

विद्वानोंने अनिर्वचनीय राधातत्त्वको भगवान्की ह्लादिनी शक्ति माना है और गोपियोंको राधा (प्रेमतत्त्व)-की पुष्टिमें सहकारी भाव स्वीकार किया है। इसलिये गोपियोंका प्रेम गोपी-भाव तथा राधाजीके प्रेमको महाभाव माना गया है। जो दिव्यातिदिव्य, नित्य, त्रिकालाबाधित तथा लोक-कल्याण एवं सृष्टिका मूल आधार है। राधा गोपियोंमें श्रेष्ठ हैं, वृन्दावन उनका नित्यलीलाधाम है। इसलिये राधाजीकी वन्दना करते हुए ऋषि कहते हैं—

वन्दे वृन्दावनानन्दां राधिकां परमेश्वरीम्।
गोपिकां परमां श्रेष्ठां ह्लादिनीं शक्तिरूपिणीम्॥

वस्तुत: माधव और श्रीराधाका महाभाव भी भगवान्के जीवनदर्शनका एक प्रमुख अंग है; क्योंकि प्रभु और श्रीराधा एक-दूसरेके सुखकी चिन्ता सतत करते रहते हैं। अपने जीवनको प्रेम और प्रेमास्पदके सुखका साधन बना लेना ही सर्वोच्च साधना है। यहाँतक कि श्रीराधानाममहिमाकी उपस्थापना करते हुए स्वयं माधव कहते हैं कि—

किसी भक्तके मुखसे राधाका 'रा' मात्र सुनकर मैं उसे उत्तम भक्ति प्रदान कर देता हूँ और 'धा' के उच्चारणसे प्रियतमा राधाके नामश्रवणहेतु मैं उसके पीछे-पीछे चलने लगता हूँ—

रा शब्दं कुर्वतस्त्रस्तो ददामि भक्तिमुत्तमाम्।
धा शब्दं कुर्वत: पश्चाद् यामि श्रवणलोभत:॥

इसी प्रकार भगवान् श्रीकृष्णके प्रति गोपियोंका भाव भी अत्यन्त एकनिष्ठ है, अनन्य, अखण्ड एवं पूर्ण है। इसलिये ज्ञानका सन्देश लेकर आये हुए उद्धवजी भी विफल हो जाते हैं। गये हुए प्रभु आयें, न आयें—वे हमारे हैं। गोपियोंकी यह भावपरायणता अन्यत्र सर्वथा सुदुर्लभ है।

इसीलिये भगवान् माधव कहते हैं—

सहाया गुरव: शिष्या भुजिष्या बान्धवा: स्त्रिय:।
सत्यं वदामि ते पार्थ गोप्य: किं मे भवन्ति न॥
मन्माहात्म्यं मत्सपर्यां मच्छ्रद्धां मन्मनोगतम्।
जानन्ति गोपिका: पार्थ नान्ये जानन्ति तत्त्वत:॥

अर्थात् गोपियाँ मेरी सहायक, गुरु, शिष्य, बान्धव—सब कुछ हैं, वे मेरी महत्ता, पूजा, श्रद्धा हैं, वे मेरे मनके भावोंको जानती हैं, अन्य कोई नहीं जानता। उन्होंने अपने घर-परिवारके बन्धनको तोड़ डाला, जो अनेक साधु एवं विद्वानोंसे नहीं हो पाता। मेरे प्रति उनकी भक्ति निर्मल, निर्दोष है। मैं उनके ऋणसे मुक्त नहीं हो सकता और मैं मुक्त होना भी नहीं चाहता।

भक्तिकी परम्परामें महाभावके दो भेद वर्णित हैं—रूढ़ एवं अधिरूढ़ किंतु अधिरूढ़के भी 'मोदन' 'मादन

दो भेद बताये गये हैं, जिनमें 'मादन' महाभावकी अतीत पराकाष्ठा है—**सा काष्ठा सा परागतिः**। कहना न होगा कि 'मादन' महाभाव राधाजीकी ही एकमात्र सम्पत्ति है; क्योंकि ह्लादिनी शक्तिकी पूर्ण परिणति ही 'मादन' है, जिसमें राधाजी नित्य मिलनानन्दकी अनुभूति करती रहती हैं।

नारदपांचरात्रमें भगवान् शिवने कहा है कि—

यथा ब्रह्मस्वरूपश्च श्रीकृष्णः प्रकृतेः परः।
तथा ब्रह्मस्वरूपा च निर्लिप्ता प्रकृतेः परा॥

अर्थात् जिस प्रकार ब्रह्मस्वरूप भगवान् श्रीकृष्ण प्रकृतिसे परे हैं, उसी प्रकार शक्तिस्वरूपा भगवती राधाजी ब्रह्मस्वरूपा, निर्लिप्त हैं और प्रकृतिसे परे हैं।

तात्पर्य यह है कि प्रकृति त्रिगुणात्मिका, सुखदुःखमोहस्वभावा और जड़ है, जबकि चेतन अमल सहज सुखराशि, सच्चिदानन्दघन परमेश्वर और परमेश्वरीका अभिन्न युगलस्वरूप सम्पूर्ण ब्रह्माण्डमें व्याप्त ज्ञान, भक्ति और कर्म सभीका मूलाधार है। यह तथ्य किसीसे भी अविदित नहीं है कि शक्ति और शक्तिमान्में अन्योन्याश्रय किंवा अभेदसम्बन्ध होता है। प्रकृत प्रसंगमें आनन्दकन्द व्रजेन्द्रनन्दनन्दन भवभयहारी विपिनविहारी वनवारी भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र स्वयं शक्तिमान् और रासेश्वरी पंचप्राणस्वरूपिणी ब्रह्माण्डाधिष्ठात्री महाशक्तिस्वरूपा परमपावनी भगवती राधा शक्ति हैं। ये दोनों परस्पर स्वयंको ऋणी मानते हैं। राधा श्रीकृष्णकी और श्रीकृष्ण राधाकी सतत श्लाघा करते रहते हैं।

विचारणीय है कि जब माधव एवं राधा दोनों एक ही ज्योतिके दो व्यावहारिक स्वरूप हैं, और भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके जन्म-कर्म दोनों दिव्य हैं तो निश्चितरूपसे 'राधा' के भी जन्म और कर्म दिव्य ही हैं तथा माधवद्वारा कृत सभी कार्योंमें सहयोग तो राधा शक्तिका ही है, अतः भगवत्संचालित सभी कार्य राधाजीके द्वारा ही होते हैं, ऐसा मनीषियोंका मत है—

त्वं कृष्णार्द्धसम्भूता तुल्या कृष्णेन सर्वतः।
श्रीकृष्णस्त्वमयं राधा त्वं राधा वा हरिः स्वयम्॥

अर्थात् ब्रह्माजी राधासे कहते हैं—'हे राधे! तुम दृष्टियोंसे श्रीकृष्णके समान हो, तुम स्वयं श्रीकृष्ण हो और श्रीकृष्ण स्वयं राधा हैं अथवा तुम राधा हो और वे स्वयं श्रीकृष्ण हैं।' इस तथ्यका किसीने निरूपण किया हो, ऐसी बात मैंने वेदोंमें नहीं देखी है।

इसी प्रकार 'माधव' के जीवनसे सम्बद्ध घटनाओंपर यदि दृष्टिपात किया जाय तो सत्यभामा, रुक्मिणी, भद्रा, जाम्बवती एवं अन्य सभीपर आपके सदा समान स्नेहको ध्यानमें रखकर आपको एक ओर यदि अखण्ड प्रेमीकी संज्ञा प्राप्त है, तो दूसरी ओर व्रजसे मथुरा, मथुरासे द्वारका, द्वारकासे प्रभासकी यात्राएँ आपके जीवनके अन्य पक्षोंकी भी उपस्थापना करती हैं।

इस प्रकार आपका जीवन-दर्शन असंख्यासंख्य विशेषताओंसे परिपूर्ण है। षोडशकलासमन्वित माधव यदि कुशल योद्धा, गोभक्त, कुशल आचार्य, निष्काम कूटनीतिज्ञ, कुशलवक्ता, प्रभावी उपदेशक, भक्तोंके शरण्य, धर्मनिष्ठ, महनीय धनुर्धर, सच्चे सखा, यज्ञ-जप-तपके प्रेरक, सनातन वैदिक धर्मके पक्षपाती, प्रेमके वशवर्ती, ऋषियोंके सम्माननीय, सभीके पूज्य, अप्रतिम वंशीवादक, नृत्य-संगीतादि विद्याओंके पुरोधा, जड़-चेतन सभीके मर्यादापालक, यमुनाके उद्धारक, वृन्दा-तुलसी प्रभृतिके स्वीकर्ता, दान-गुण-वर्ण-निष्ठा-आहार-कर्मफल-कारण-कार्य, प्रकृति-विकृति, मन-इन्द्रिय, संन्यास, कर्मयोग, त्याग, तप, भाव यज्ञ, सदसद् कर्ता, करण, बुद्धि, शम, दम, शुचिता, धृति, दाक्ष्य, प्रवृत्ति-निवृत्ति, अहंकार, बल, काम-क्रोध, परिग्रह एवं वैराग्यके प्रतिपादक हैं; तो दूसरी ओर सभीको यह संदेश भी देते हैं कि—

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्वभूतानि यन्त्रारूढानि मायया॥

(श्रीमद्भगवद्गीता १८। ६१)

अर्थात् हे अर्जुन! ईश्वररूप मैं सभी प्राणियोंके हृदयमें विद्यमान रहता हूँ और शरीररूपी यन्त्रमें आरूढ़ उन सभीको अपनी मायासे घुमाता रहता हूँ। इसलिये—

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्॥

(श्रीमद्भगवद्गीता १८। ५६)

कार्योंको सतत करते हुए भी मेरी कृपासे सनातन अविनाशी परमपदको प्राप्त कर लेता है।

एतावता अर्जुनरूपी प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि वह भगवान्‌के प्रति अपनी चित्तवृत्तियोंको केन्द्रितकर उनकी असीमानुकम्पासे जन्म-मृत्यु आदि दुर्गम संकटोंकी नदीको पार कर ले, अन्यथा स्वयंका अहंकार उसे नष्ट कर देगा और वह जीवनमें अपने लक्ष्यतक कभी नहीं पहुँच सकेगा। यही कारण है कि अपने सभी कर्मोंको प्रभुके प्रति अर्पितकर प्रभुपरायण होकर समत्वबुद्धिरूप निष्कामकर्मयोगका विवेक और ज्ञानपूर्वक अवलम्बनकर एकमात्र अपने चित्तको उन्हीं प्रभुमें केन्द्रित रखना चाहिये; क्योंकि वही श्रेयका वास्तविक मार्ग है। वे ही अधिष्ठान और विश्वके कर्ता हैं, उनसे भिन्न अन्य कुछ भी नहीं; क्योंकि संसाररूप कार्यके मूलकारण प्रभु ही हैं। शास्त्रका कहना है कि—'**ब्रह्मणः प्रजाः प्रजायन्ते।**' अनन्त ब्रह्मसे ही सभी उत्पन्न होते हैं तथा जहाँसे उत्पन्न होते हैं, अन्तमें उसीमें विलीन भी हो जाते हैं—

यस्माज्जातं जगत् सर्वं तस्मिन्नेव प्रलीयते।

इस प्रकार सर्वातीत, सर्वेश्वर, सर्वतोभावेन मधुर, सर्वरसामृतसिन्धु, अवतारोंके अवतार सौन्दर्यसुधासिन्धु, भक्तजनवत्सल, नित्यसगुण, नित्यनिर्गुण, करुणावरुणालय भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रके जीवनदर्शन एवं उनसे प्राप्त उपदेशोंके आधारपर यदि हम जीवनमें आचरण करें, तो संसारकी सभी समस्याएँ स्वतः हल हो जायँगी और हमारे मानव जीवनका वास्तविक लक्ष्य भी पूर्ण हो जायगा। सबके स्वामी, प्रभु, सर्वसाक्षी, सर्वसुहृद्, सर्वाधार, सभीके निधान, उत्पत्ति और प्रलयके कारण भगवान्‌के चरणारविन्दमें मैं प्रणाम करता हूँ—

वन्दे महापुरुष ते चरणारविन्दम्।

बोध-कथा—

सत्यकी शक्तिका अद्भुत चमत्कार

(श्रीरघुनाथप्रसादजी पाठक)

स्काटलैण्डके लोगोंने इंगलैण्डके राजाके विरुद्ध विद्रोह किया। विद्रोहके असफल हो जानेपर विद्रोहियोंको बड़ी निर्दयतापूर्वक दण्डित किया गया। लोग कतारमें खड़े किये और गोलीसे उड़ा दिये जाते थे। एक बार पन्द्रहवर्षीय लड़का गोलीसे उड़ाये जानेके लिये कतारमें खड़ा किया गया। सेनापतिको उस बालकपर दया आयी। उसने कहा 'बच्चे! यदि तुम क्षमा माँग लो, तो तुम मृत्यु-दण्डसे बच सकते हो।' लड़केने क्षमा माँगनेसे इनकार कर दिया। इसपर सेनापतिने लड़केसे कहा—'मैं तुम्हें चौबीस घंटेकी छुट्टी देता हूँ। तुम्हारा कोई प्रिय जन हो तो जाकर उससे मिल आओ।' लड़का अपनी अकेली माँसे मिलने घर चला गया। जाकर देखा कि माँ बेहोश पड़ी है। माँको होशमें ले आनेपर कहा, 'माँ! मैं आ गया हूँ।' अपने एकलौते बेटेका मुँह देखकर और यह सोचकर कि पुत्रकी जान बच गयी है, माँको अपार हर्ष हुआ। उसने बालकको गोदमें बिठाकर उसे जी भरकर प्यार किया। समय समाप्त होता जानकर बालक जानेकी तैयारी करने लगा। माँने पूछा, 'बेटा! कहाँ जाते हो?' बालककी आँखोंमें आँसू आ गये। हृदयको सँभालकर उत्तर दिया, 'माँ! मुझे चौबीस घंटेकी छुट्टी मिली थी। मृत्युदण्ड पानेके लिये कैम्पको जाता हूँ। ईश्वर तुम्हारा रक्षक है।' माँको कुछ कहनेका अवसर दिये बिना ही बालक घरसे निकल गया और ठीक समयपर सेनापतिके पास पहुँच गया। सेनापतिको उस बालकके लौटनेकी आशा न थी। बालककी सचाईसे सेनापतिपर इतना प्रभाव पड़ा कि उसने तत्काल उसकी मुक्तिकी आज्ञा जारी कर दी।

वस्तुतः सत्यसे चरित्रमें बल आता, मनुष्यका विश्वास बढ़ता और कठोर-से-कठोर हृदयमें भी कोमलता और दयाका संचार हो जाता है।

हमारे आन्तरिक शत्रु—

यह 'और' 'और' की तृष्णा!

[लोभका कारण और निवारण]

(पं० श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट)

पण्डित रामचन्द्र शुक्लने ठीक ही लिखा है—'रुपयेके रूप, रस, गन्ध आदिमें कोई आकर्षण नहीं होता, पर जिस वेगसे मनुष्य उसपर टूटते हैं, उस वेगसे भौंरे कमलपर और कौए मांसपर भी न टूटते होंगे।····· एक धातुखण्डके गर्भमें कितने प्रकारके सुख और आनन्द मनुष्य समझता है।····· विनिमयकी कठिनता दूर करनेके लिये मनुष्योंने कुछ धातुओंमें सब आवश्यक वस्तुएँ प्राप्त करानेका कृत्रिम गुण आरोपित किया, जिससे मनुष्यमात्रकी सांसारिक इच्छा और प्रयत्नका लक्ष्य एक हो गया, सबकी टकटकी टकेकी ओर लग गयी। लक्ष्मीकी मूर्ति धातुमयी हो गयी, उपासक सब पत्थरके हो गये।·····राज-धर्म, आचार्य-धर्म, वीर-धर्म—सबपर सोनेका पानी फिर गया, सब टका-धर्म हो गये।·····ब्राह्मण-धर्म और क्षात्र-धर्मका लोप हो गया, केवल वणिक्-धर्म रह गया!'

× × ×

सच पूछिये तो आजका युग पैसेका ही युग है। कहा था ईसाने कि 'सुईके छेदसे ऊँट भले ही निकल जाय, पर पैसेवालेका स्वर्गमें प्रवेश हो नहीं सकता'—पर कौन परवा करता है ईसाके इस उपदेशकी! उलटे, लोग तो यहाँतक कहने लगे हैं कि चाँदीकी जूती स्वर्गमें भी राह कर सकती है!

और फिर स्वर्ग देखा किसने है? 'खाओ, पियो, मौज करो'—यही तो हमारा स्वर्ग है। उसके लिये '**ऋणं कृत्वा घृतं पिबेत्**'—हमने अपना मूल मन्त्र बना रखा है!

अभी तो चैनसे गुजरती है,
आकवतकी खुदा जाने!

× × ×

और हम सब पैसेकी ओर दौड़े क्यों न?

सर्वे गुणाः काञ्चनमाश्रयन्ते।

× × ×

आपके लिये भैंस बराबर है, न आपको बोलनेका शऊर है, न लिखने-पढ़नेका। फिर भी आप विद्वान्-शिरोमणि हैं। दूसरोंका गला काटनेमें, दूसरोंका पैसा हड़पनेमें, दूसरोंको सतानेमें, शोषण और अत्याचार करनेमें आप अपना सानी नहीं रखते, फिर भी आप 'धर्मावतार' हैं, 'सेवा और त्यागकी मूर्ति' हैं! धन आपके पास है, पैसा आपके पास है, बैंकमें अच्छा बैलेंस है, फिर दुनियाभरके गुणोंका आपमें आरोप होते देर नहीं। विद्वान् हैं तो आप, पण्डित हैं तो आप, धर्मात्मा हैं तो आप, कुलीन हैं तो आप! आप तो फिर आप ही हैं।

और यदि आपके पास पैसा नहीं है, पैसेकी कमी है अथवा आपका पैसा नष्ट हो गया है, रुपयेकी गरमी जाती रही है तो आप कौड़ीके तीन हैं। लाख गुण हैं आपमें, फिर भी आपके घनिष्ठ मित्र भी आपसे कन्नी कटाते फिरते हैं कि कहीं आप उनसे कुछ माँग न बैठें।

× × ×

द·····अभी उस दिन अपने बँगलेपर मीठी नींद ले रहे थे कि नौकरने खबर दी कि दूकानमें आग लग गयी है जोरकी और भीतरसे धड़ाकोंकी आवाज आ रही है। लगता है डाकूलोग भीतर घुसे हों।

चौंककर हक्के-बक्केसे द·····उठे। सीढ़ियोंसे फिसले तो रीढ़की हड्डीमें चोट आयी। दौड़ते-पड़ते दूकानपर पहुँचे तो देखा उनकी आँखोंके सामने उनका लाखका घर खाक हो रहा है।

रातको शायद किसीने जलती सिगरेटका टुकड़ा गद्दीपर छोड़ दिया। आग सुलगी। दूकानमें मच्छर बम रखे थे, जो भड़क उठे और लगे धड़ाका करने।

× × ×

फायर ब्रिगेड आया। उसने जैसे-तैसे आग तो बुझायी, पर द·····के भीतर जो आग लगी थी, उसपर पानी छिड़कनेकी सामर्थ्य किसमें थी।

गयी, फर्नीचर ही था सात-आठ हजारका।

दूकानसे द·····लौटे, तो जोरका ठहाका मारा उन्होंने।

और उसके बाद ही उन्हें चक्कर आया और बेहोश।

× × ×

कई-कई बार द·····को इंजेक्शन देने पड़े, सुइयाँ लगीं। नींद लानेकी गोलियाँ दी गयीं। चक्करोंका क्रम कई दिन चलता रहा। पागलपन-जैसी हालत थी। बीच-बीचमें सहसा उठते। चल पाते नहीं और फर्शपर लुढ़क जाते। कभी माथा फूटता, कभी हाथ-पैर।

× × ×

हमलोग जब सान्त्वना देने पहुँचे, तब देखा द·····को जोरका मानसिक धक्का लगा है।

बोले—हाय, मेरा तो सर्वस्व चला गया। यह सारा महल लाखोंकी पूँजीसे खड़ा किया था। सब चौपट हो गया। मैंने तो कभी किसीका बुरा भी न चेता था।·····

समझाया उन्हें—घबराइये मत। फिर सम्पत्ति आयेगी। फिर महल खड़ा होगा। व्यापारीका भाग्य कौन जानता है! फिर चेष्टा करिये। दिलको क्यों छोटा करते हैं?

पर अब पहले-जैसा बल कहाँ? वह स्फूर्ति कहाँ? Bad days are ahead. किस्मत ही खराब है। मुसीबत-पर-मुसीबत आ रही है। अभी उस दिन एक बीमा-एजेंट आया था। पचास हजारका बीमा करानेको कहता था, आप सिर्फ दस्तखत कर दीजिये। गर्दनिया देकर उसे निकाल दिया। काश, ऐसा जानता होता।

लाख समझाया, पर पैसेका घाव कहीं समझानेसे भरता है?

× × ×

कुछ दिनों बाद जब पता चला कि नुकसान अन्दाजसे कहीं कम हुआ है और बैंकने उनसे बिना पूछे ही उनके नामपर अच्छी रकमका बीमा करा लिया था, मानसिक हालत सुधरी।

× × ×

आर्थिक धक्का लगनेसे, पैसा नष्ट हो जानेसे, बैंकोंका दिवाला निकल जानेसे कितने ही लोगोंके साहसका भी दिवाला निकल जाता है। कितने ही व्यक्ति तो सचमुच ही पागल हो जाते हैं।

हमारे समाजिक जीवनका सारा ढाँचा ही आज पैसेपर खड़ा है। इसलिये पैसेके चले जानेपर मनुष्यका दुखी होना स्वाभाविक है।

× × ×

आपके पास पैसा है तो समाजमें आपकी प्रतिष्ठा है, सर्वत्र आपका आदर है, आपके लाखों खून माफ हैं, आप स्याहको सफेद और सफेदको स्याह बना सकते हैं, हाकिम आपसे मिलकर खुश होते हैं, लोग आपका दबदबा मानते हैं, आपके अवगुण गुण बन जाते हैं, आपके पाप पुण्य बन जाते हैं, आपकी बेईमानी ईमानदारीका चोगा पहन लेती है। संसारका सारा सुख, सारा वैभव आपके चरणोंपर लोटता है। बड़े-से-बड़े अधिकारी आपके इशारोंपर नाचते हैं।

× × ×

आप कितने ही विद्वान् हों, कितने ही गुणी हों, कितने ही ईमानदार हों, कितने ही सच्चरित्र हों, कितने ही कुलीन हों—आपके पास यदि पैसेका गुण नहीं तो सब बेकार है। आजके युगमें विद्वान् गली-गली मारे फिरते हैं, गुणी दर-दर ठोकरें खाते हैं, सच्चरित्र और ईमानदार दाने-दानेके लिये मोहताज रहते हैं और किसीके कानपर जूँतक नहीं रेंगती।

वही हाल है—

गली-गली गोरस फिरे, मदिरा हाट बिकाय!

× × ×

तब सारा संसार पैसेके पीछे बावला होकर घूमता है तो इसमें आश्चर्य क्या!

× × ×

उसकी झनकार तो कानोंको भाती है। उसका स्पर्श पाते ही तबीयत तो खिल उठती है। धातुके इस टुकड़ेमें जो आकर्षण है, उसकी खबर किसे नहीं है? और अब तो यह धातु-खण्ड कागजकी शकलमें आ गया है—नोट, चेक, हुण्डी! इन कागजोंको देखते ही जी बागबाग हो उठता है। पृथ्वी-तलपर उपलब्ध होनेवाले भौतिक सुख कागजके इन टुकड़ोंपर आश्रित हैं। भोजन, वस्त्र और मकानके लिये भी इनकी जरूरत है और अन्य सुखोपभोगोंके लिये भी। आज फकीर तो पैसा माँगते ही हैं, अमीर भी उसीकी याचना करते हैं।

× × ×

पैसेके लिये मनुष्य चोरी करता है, बेईमानी करता है, शोषण और अत्याचार करता है, धोखा देता है, विश्वासघात करता है, ४२० पर आमादा होता है, दम्भ और पाखण्ड करता है, रिश्वत देता है, रिश्वत लेता है, भ्रष्टाचार करता है, डाका डालता है, खून करता है और क्या नहीं करता?

× × ×

पैसेके लिये दूधवाला दूधमें पानी मिलाता है, घीवाला घीमें डालडा और चर्बी फेंटता है, तेलवाला सरसोंके तेलमें कटैयाका तेल मिलाता है। पैसेके लिये तम्बोली २०० की कहकर ढोलीमें १७५ पान ही थमाता है। हलवाई सेरभर कहकर १५ छटाँक ही पूड़ी तौलता है। बजाज दस गज कहकर पौने दस गज ही नाप देता है। मिलवाला ९ गजकी धोतीपर साढ़े ९ गजकी मुहर मारता है। सुनार सोनेमें ताँबा मिलाता है। मधुवाला शहदमें शक्करका जलाव मिलाता है। दूकानदार चीनीके शर्बतमें सैकरीन मिलाता है। सीमेण्टमें मिट्टी भरता है। गल्लेमें कूड़ा-कर्कट मिलाता है। पानके मसालेमें खड़िया भर देता है।

× × ×

इसी पैसेके लिये असलीके नामपर नकली चीजें ग्राहकोंके मत्थे मढ़ी जाती हैं। बढ़िया कहकर घटिया माल 'सप्लाई' किया जाता है। कड़ुवा तेल मँहगा पड़ता है तो 'ह्वाइट आयल' की पूड़ियाँ लोगोंको खिलायी लेने लगिये तो बड़े फल नामको देते हैं, छोटे और खराब फल ही अधिक मढ़ देते हैं। छटाँकभर अंगूर लीजिये, तो पसँगेमें ही ५, ७ अंगूर मार देते हैं!

मतलब यह कि खाने-पीनेकी चीज हो, पहनने-ओढ़नेकी चीज हो, दवादारू हो या जीवनके उपभोगकी कोई वस्तु हो, शायद ही कोई चीज ऐसी बची हो, जिसमें मिलावट न की जाती हो, धोखा न दिया जाता हो और ग्राहककी हजामत न बनायी जाती हो। कोई कम तौलता है, कोई बुरी चीजको अच्छा बताता है, कोई कुछ करता है, कोई कुछ।

× × ×

जीवनका शायद ही कोई क्षेत्र ऐसा बचा हो, जहाँ इस अनैतिकताने अपने पाँव न पसारे हों। हम अपने ही उस्तरेसे अपना गला काट रहे हैं। भाई भाईको धोखा दे रहा है। जनताकी पुलिस, जनताके दूकानदार, जनताकी सरकार—सब एक ही प्रवाहमें बह रहे हैं!

हम हों या आप, छोटे हों या बड़े, स्त्री हों या पुरुष, बालक हो या वृद्ध—'और' 'और' की यह तृष्णा सबको पतनकी ओर घसीट रही है। जादूकी इस लकड़ीको पानेके लिये सभी लोग जमीन-आसमानके कुलावे एकमें मिला रहे हैं। पैसा और धन ही सबका लक्ष्य हो रहा है।

× × ×

इस दौड़में जो जितना आगे है, उसकी उतनी ही ज्यादा कद्र है। दूसरोंको लूटनेमें जो जितना उस्ताद है, उतना ही उसका बोलबाला है। पद और प्रतिष्ठा, मान और सम्मान—सभी कुछ तो आज पैसेपर आश्रित है।

आज पैसेके लिये ईमान बिक रहा है, परमार्थ और अध्यात्मका नाम कलंकित हो रहा है, धर्म और सदाचार स्वाहा हो रहा है, इज्जत और अस्मत लुट रही है। न्याय और कर्तव्यकी बलि चढ़ रही है। नेता और अधिकारी सभी लालचमें डूबे हैं। जैसे भी हो, पैसा मिलना चाहिये। अपमान हो, जिल्लत हो, कष्ट हो, परेशानी हो, छल हो, झूठ हो, धोखा हो, पैसेके लिये सब कबूल। सेठजीकी बीबी उनसे दो प्रेमभरे शब्द पानेके लिये बरसों

महाराजजी ज्ञान और प्रेमपर भाषण दे रहे हैं, बाबाजी काँटोंके बीचमें पड़े हुए हैं, पंचाग्निमें तप रहे हैं, समाधिका ढोंग पसार रहे हैं! क्यों? पैसेके लिये तो!

× × ×

कहते हैं किसी मस्त और निश्चिन्त व्यक्तिके मकानमें किसीने रुपयोंसे भरी थैली फेंक दी। उसने गिना तो निन्यानबे रुपये निकले। सोचा एक रुपया और मिल जाय तो पूरे सौ हो जायँ।

बेचारेने किसी तरह पेट काट-काटकर एक रुपया जुटाया। अब उसके पास पूरे सौ हो गये। पर रुपयेकी चाट लगी सो लगी, सोचा, सौका अंक ठीक नहीं माना जाता है। १०१ का अंक शुभ होता है। फिर एक रुपया जुटानेके फेरमें पड़ा। 'और' 'और' की यह तृष्णा रात-दिन बढ़ने लगी और उसकी सारी मस्ती हवा हो गयी?

× × ×

हम सब इस 'निन्यानबेके फेर' में पड़े हैं। लाखोंका कारबार है, पर सेठजीको फिर भी सन्तोष नहीं। उन्हें करोड़ चाहिये। करोड़पतिको अरब चाहिये। एक रुपयेवालेको दस चाहिये, दसवालेको सौ, सौवालेको हजार और हजारवालेको लाख। इस लोभका कहीं पार नहीं।

× × ×

अभी उस दिन एक लखपती बन्धु कह रहे थे कि अमुक नगरमें एक सेठके घर ठहरा तो सेठानीजी बोलीं—'क्या बताऊँ, तीन-तीन कारें हैं, फिर भी जब देखो मुझे कारकी दिक्कत हो जाती है। कहीं जाना होता है तो घण्टों इन्तजार करते रहना पड़ता है कि कब कोई कार लौटे। सोचती हूँ कि कम-से-कम एक कार तो और ले ली जाय!·····

अमीर हो, गरीब हो, राजा हो, रंक हो, किसान हो, मजदूर हो,—सबको यह 'और' 'और' की तृष्णा खाये जा रही है!

'ज़रकी तमासे ख़ाक छानते हैं न्यारिये!'

× × ×

और तो और, साधु और संन्यासी, त्यागी और महात्मा, जो संसारसे विरक्त रहते हैं, घरबार छोड़कर

इनसे पूछिये—बाबा, माया छोड़कर फिर मायामें फँस रहे हो! मठ और मन्दिर, कुआँ और बावली, धर्मशाला और गोशाला, आश्रम और विद्यालयके चक्करमें उलझे हो? अपरिग्रहका उपदेश देते हो और खुद परिग्रह बढ़ाते ही चले जा रहे हो, क्यों?

उनका सीधा जवाब होगा—क्या करें बच्चा! बड़ी ठगिनी है यह माया!

'माया तजूँ तजी नहिं जाय,
फिर फिर माया मोहिं लपटाय!!'

× × ×

आर्थिक विषमता आजके युगका सबसे भारी अभिशाप है। करोड़ों व्यक्ति आज कौड़ी-कौड़ीके लिये तरस रहे हैं और मुट्ठीभर लोग गलेतक विलासिताकी नदीमें डूबे हुए हैं। एक ओर अभावोंका ताण्डव और दूसरी ओर बाहुल्यका भी बाहुल्य! एक ओर रात-दिन अपना खून-पसीना एक करनेवाले किसान और मजदूर, दूसरी ओर उनकी कमाईपर गुलछर्रे उड़ानेवाले करोड़पति। एक ओर जूँठनके टुकड़ोंके लिये नर-कंकाल और कुत्तोंमें खुली सड़कपर कुश्ती होती है, दूसरी ओर मोटरमें सैर करनेवाले 'टामी' की खिदमतके लिये दस-दस नौकर रखे जाते हैं। इधर गरीबोंकी गरीबी दिन-दिन बढ़ रही है, उधर अमीरोंकी अमीरी भी दिनोंदिन बढ़ रही है। किसीके पास टूटी-फूटी झोंपड़ीके भी लाले हैं और किसीके पचासों महल आसमानसे बातें करते हैं!

इस वैषम्यको मिटानेके लिये अर्थशास्त्रियों, मनीषियों और चिन्तकोंने साम्यवाद, समाजवाद-जैसे कितने ही वाद निकाले हैं, पर समस्या जहाँकी तहाँ है। युद्धोंकी आग भी इसे सुलझानेमें असमर्थ रही है। क्यों?

इसीलिये कि यह 'और' 'और' की तृष्णा सभीके भीतर घुसी बैठी है! जो इस विषमताको मिटानेकी बात कहते हैं, वे भी इसीके चक्करमें फँसे हैं। वे पूँजीवाद नहीं मिटाना चाहते हैं, पूँजीका परिवर्तन चाहते हैं।

× × ×

मद्रासकी २७ जुलाईकी एक खबर है। वहाँके

अपंग भिक्षुकसे पूछा तो उसने बताया कि मैं २६ वर्षसे भिक्षावृत्ति अपनाये हूँ। मद्रास नगरकी एक अत्यधिक महत्त्वपूर्ण बस्तीमें मेरा एक कितना अच्छा मकान है। डाकखानेके सेविंग बैंक खातेमें मैंने ४००० रुपये जमा कर रखे हैं। भिक्षाके साथ-साथ मैं ताबीज भी बाँटता हूँ और इससे मुझे प्रतिदिन दो रुपयेसे लेकर पन्द्रह रुपयेतककी आमदनी होती है।

जब भिक्षुकोंका यह हाल है, तब यदि गृहस्थ और दूकानदार पैसेके पीछे पागल दीख पड़ते हैं तो हमें चौंकना न चाहिये। पढ़े-लिखे विद्वान् हों या निरक्षर भट्टाचार्य, साधु हों या महात्मा, यति हों या संन्यासी, मजदूरी करनेवाले हों या खेत जोतनेवाले, किसान हों या जमींदार—मूलमन्त्र सबका पैसा ही दिखायी देता है! सब एक ही सड़कपर बेतहाशा दौड़े जा रहे हैं।

× × ×

कविवर मैथिलीशरण गुप्तने ठीक कहा है—

मानव मन दुर्बल और सहज चंचल है।
इस जगतीतलमें लोभ अतीव प्रबल है॥
देवत्व कठिन, दनुजत्व सुलभ है नरको।
नीचेसे उठना सहज नहीं ऊपरको॥

(साकेत)

तभी तो वेदमें कहा है—

हिरण्मयेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं मुखम्।
तत्त्वं पूषन्नपावृणु सत्यधर्माय दृष्टये॥

सत्यके दर्शनके लिये इस सुनहले ढक्कनको उघाड़ना ही पड़ेगा। 'और' 'और' की तृष्णासे छुटकारा लेना ही पड़ेगा। जबतक हमारे नेत्रोंपर काम और क्रोध, लोभ और मोह, मद और मात्सर्यकी पट्टी बँधी रहेगी तबतक कल्याण कहाँ! तबतक हमें सत्यनारायणके दर्शन हो ही कैसे सकते हैं?

जगल्लुब्धा धनमयं कामुकाः कामिनीमयम्।
नारायणमयं धीराः पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः॥

बोध-कथा—

परिश्रम गौरवकी वस्तु है

अमेरिकामें स्वातन्त्र्य-संग्रामके समय एक किलेबन्दी हो रही थी। कुछ सैनिकोंके द्वारा एक नायक उस कामको करा रहा था। सैनिक किलेकी दीवारपर एक भारी लकड़ी चढ़ानेका प्रयत्न कर रहे थे; किंतु सफल नहीं हो रहे थे। नायक उन्हें आज्ञा तो दे रहा था और प्रोत्साहित भी कर रहा था; किंतु स्वयं लकड़ी उठानेमें हाथ नहीं लगाता था।

उधरसे घोड़ेपर बैठे एक सज्जन निकले। उन्होंने नायकसे कहा—'आप भी लकड़ी उठवानेमें लग जायँ तो लकड़ी ऊपर चढ़ जाय।'

नायकने उत्तर दिया—'मैं इस टुकड़ीका नायक हूँ।'

'आप मुझे क्षमा करें।' वे सज्जन घोड़ेपरसे उतर पड़े। अपना कोट उन्होंने उतार दिया, टोपी अलग रख दी और कमीजकी बाहें ऊपर चढ़ाकर सैनिकोंके साथ जुट गये। उनके परिश्रम तथा सहयोगका परिणाम यह हुआ कि लकड़ी ऊपर चढ़ गयी।

'धन्यवाद महोदय!' नायकने उन सज्जनको लकड़ी चढ़ जानेपर कहा।

अपना कोट पहनते हुए वे बोले—'इसमें धन्यवादकी तो कोई बात नहीं। आपको जब कभी ऐसी आवश्यकता हो तो अपने प्रधान सेनापतिके पास सन्देश भेज दिया करें, जिससे मैं आकर आपकी सहायता कर जाया करूँ; क्योंकि मुझे पता है कि परिश्रम करना हीनताकी नहीं, गौरवकी वस्तु है।'

'प्रधान सेनापति!' बेचारा नायक तो हक्का-बक्का रह गया। परंतु प्रधान सेनापति घोड़ेपर चढ़कर शीघ्रतापूर्वक वहाँसे आगे निकल गये।

सहानुभूतिके दो मीठे शब्द!

(प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र)

एक समय एक कवि (Charles Mackay) बहुत उदास था, कारण यह था कि उसे रुपयोंकी बहुत आवश्यकता थी। एक धनी व्यक्तिको ज्ञात हुआ कि कवि बहुत आर्थिक संकटमें है। उसे अपने धनका बहुत गर्व था। अत: उसने अपने धनद्वारा कविकी सहायता की; पर उसने जो मदद की, वह असहानुभूतिपूर्ण और बिना मीठे शब्दोंके बोले हुए थी। आर्थिक संकट टलनेपर कविने उसे बहुत धन्यवाद दिया और रुपया वापस लौटा दिया। इस प्रकार वह धनी व्यक्तिकी उदारताके अहसानसे मुक्त हुआ।

कुछ समय पश्चात् वही कवि बीमार हुआ। उसके शरीरमें भयंकर पीड़ा थी, सिर दर्दसे फटा पड़ता था। वह शारीरिक और मानसिक पीड़ासे कराह रहा था। संयोगवश उसकी झोपड़ीके पाससे एक निर्धन व्यक्ति निकला। उसे कविकी बीमार अवस्थापर दया आ गयी। उसने उसके सिरको बाँधा, दबाया, प्यारसे दवा लगायी। रात-दिन रोगीकी शय्याके सिरहाने बैठकर सेवा-शुश्रूषा की। सहानुभूतिभरे मीठे-मीठे शब्द बोलकर पीड़ा कम की। उसके इस मधुर व्यवहार और सहानुभूतिपूर्ण प्रेम-चिकित्सासे कवि स्वस्थ हो गया। कवि कहता है, 'प्रथम धनी व्यक्तिको रुपया वापस करके मैं उसके अहसानसे मुक्त हो गया था, पर इस दूसरे उदार निर्धन व्यक्तिके सहानुभूतिपूर्ण मीठे-मीठे शब्दोंका अहसान मैं कैसे चुकाऊँ? रुपया, सोना, हीरे, मोती बहुमूल्य हैं, परंतु ईश्वरकी देनके रूपमें मनुष्यके हृदयमें रहनेवाली यह दैवी सहानुभूति रुपये-पैसोंकी अपेक्षा कहीं महान् और प्रभावोत्पादक है। मानसिक रोगोंकी अमोघ औषध है।'

सहानुभूति वास्तवमें महान् दैवी औषध है। यह देनेवालेको और जिसके प्रति सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार किया जाता है, दोनोंको ही लाभ पहुँचानेवाली है। मनुष्यके गुप्त दु:खों, दलित इच्छाओं और मानसिक जटिलताओंका अन्त करनेवाली है।

वास्तवमें मानसिक क्षेत्रकी जटिलता, दुराव-छिपावसे निराशाके कारण हैं। हम दुखी इसीलिये रहते हैं कि मनमें व्यथाका भार छिपाये हुए हैं। हम अपनी परेशानियोंको जितना अधिक दूसरोंसे, समाजसे, अपने बड़े-बूढ़ों, बुजुर्गों, अफसरोंसे छिपाते हैं, उतनी ही जटिलता हमारे मानसिक क्षेत्रमें उत्पन्न होती जाती है। जैसे किसी वस्तुको छिपाकर अँधेरी कोठरीमें रखनेसे उसमें बदबू आने लगती है और वह सड़-गलकर नष्ट हो जाती है, उसमें कीड़े पड़ जाते हैं, उसी प्रकार जिन गन्दे विचारों, वासनाओं, ईर्ष्या, तृष्णा, द्रोह, चिन्ता, भय आदि विकारोंको आप छिपाकर रखते हैं, वे मानसिक जटिलता उत्पन्न करते हैं। दुराव-छिपाव मानसिक रोगोंको उत्पन्न करता है। इसके विपरीत जो युग-युगसे छिपे मनके दुरावको दूसरोंके समक्ष खोल देता है, वह उतनी ही मानसिक शान्ति प्राप्त करता है। उसकी विचारधारा उतनी ही स्पष्ट और स्वस्थ होती जाती है।

मनुष्य अपने कुचिन्तन और दुरावद्वारा मानसिक व्याधियाँ उत्पन्न करता है। वास्तवमें जो बात छिपायी जाती है, वह स्वयं पापमय होती है। हम उसे छिपाते ही इसलिये हैं कि वह नीच है, झूठ है, पापमय है, दुष्कर्मसे संयुक्त है। हमारी अन्तरात्मा हमसे कहती है कि उसका फल दु:खदायी होगा। मनमें किसीके प्रति कटुभाव रखना एक खतरा है। चिन्ताके समान कोई अग्नि नहीं, द्वेषके समान कोई विष नहीं, क्रोधके समान कोई शूल नहीं, लोभके समान कोई जाल नहीं। ये दोष मनमें इकट्ठे होनेपर मनुष्य कुछ ही समयमें पापपंकमें डूब जाता है।

यदि मनुष्य अपने हृदयकी व्यथाको दूसरोंके समक्ष खोलकर रख दे और उनसे अपने कष्टोंके लिये थोड़ी-सी सहानुभूति पा ले, तो उसे मानसिक शान्ति मिलती है। मित्र उसे दूषित भावनाओंसे बचाते हैं। कुचिन्तनकी शृंखला टूट जाती है और व्याधियाँ दूर हो जाती हैं। जबतक मनुष्य अपनी मानसिक कठिनाइयोंको दूसरोंके समक्ष प्रकट करता रहता है, मित्रोंसे बातचीत करके

रहता है, तबतक वे मानसिक जटिलता और परेशानीका कारण नहीं बनतीं; किंतु हम अपनी सभी भावनाओंको अपने मित्रोंके समक्ष प्रकट नहीं कर सकते, क्योंकि वे घृणित होती हैं। हमारी अन्तरात्मा कहती है कि वे उन्हें सुनते ही हमसे घृणा करने लगेंगे। इसी प्रकार हम अपने किये हुए गन्दे कार्योंको दूसरोंसे कहते हुए डरते हैं। हम उन्हें दूसरोंके समक्ष स्वीकार करके हृदयका भार हलका कर सकते हैं, पर ऐसा उसीसे कर सकते हैं, जो हमारे साथ सच्ची सहानुभूति प्रदर्शित करे।

सहानुभूतिका बहुत कार्य ऐसे मानसिक रोगियोंसे स्वास्थ्य उत्पन्न करनेमें देखा जाता है। जो मानसिक चिकित्सक अपने मानसिक रोगियोंसे जितनी अधिक सहानुभूति दिखाता है, वह उतना ही उनका विश्वास प्राप्त कर लेता है और उसपर वे उतना ही अपना गुप्त पाप या दु:ख प्रकट कर देते हैं। चिकित्सक अपने मीठे-मीठे सहानुभूतिपूर्ण शब्दों और व्यवहारोंसे उन्हें दुश्चिन्तनसे हटाकर शुभ चिन्तनमें निमग्न करता है।

महात्मा बुद्धने एक बड़े पतेकी बात कही है, जिसको आप सहानुभूतिसे ही कार्यरूपमें परिणत कर सकते हैं। वे कहते हैं—

'ढके हुएको खोल दो, छिपे हुएको स्पष्ट कर दो, तो तुम अपने पापोंसे मुक्त हो जाओगे; क्योंकि छिपानेसे ही पाप लगता है, उघड़ा हुआ पाप नहीं लगता।'

मनुष्य अपनी गुप्त बातें तभी प्रकट करता है, जब वह यह जान लेता है कि अमुक व्यक्ति मुझसे सच्ची सहानुभूति दिखायेगा। सहानुभूतिके दो मीठे शब्द पाते ही रोगी व्यक्ति अपने जटिल भाव अपने-आप प्रकाशित करने लगता है। सहानुभूतिका मृदु अवलम्ब पाते ही चेतना इनका अपना प्रकाशन नहीं रोक सकती। छिपे हुए दु:ख तथा मानसिक ग्रन्थियाँ टूक-टूक होकर दूर हो जाती हैं। यदि हमारे बड़े लोग बच्चोंसे और अफसर अपने मातहतोंसे सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार करने लगें, तो सदा मानसिक आरोग्य बना रहेगा। सहानुभूति आन्तरिक गुलामीके बन्धन काट डालती है। जिन गुप्त भयों या पापोंसे मनुष्य बँधा रहता है, उनके बन्धन टूटते ही वह आनन्द प्राप्त करता है।

इस प्रसंगमें एक मनोविज्ञानविशारद सत्य ही लिखते हैं—मानसिक विकारको बाहर निकालनेमे सहानुभूतिका भाव बहुत ही लाभकारी होता है। रोगी उससे सहानुभूति रखनेवाले व्यक्तिके सामने अपने मनके छिपे भाव प्रकाशित कर सकता है। जो व्यक्ति रोगीसे घृणा करता है अथवा उससे तटस्थ रहता है, उसके समक्ष रोगी अपने भाव कैसे प्रकाशित कर सकता है पागलसे घृणा करनेवाले व्यक्तिको देखकर पागलका रोग और भी बढ़ जाता है। इसके प्रतिकूल सहानुभूति रखनेवाले व्यक्तिके समक्ष पागलका उन्माद कम हो जाता है। डॉ० होमरलेन ऐसे अनेक शेलशामके रोगियोंको चंगा कर सके, जो डॉ० फ्रॉयडकी विधिसे चंगे न हो सके थे। इसका प्रधान कारण डॉ० होमरलेनका रोगियोंके प्रति सहानुभूतिका भाव था। जहाँ डॉ० फ्रॉयड मनुष्यके मौलिक स्वभावको स्वार्थी और पाशविक मानते थे, डॉ० होमरलेन उसे दैविक मानते थे। इसलिये उन्हें रोगीके साथ सहानुभूति स्थापित करना आसान होता था। इस सहानुभूतिके कारण रोगी खुलकर अपने मनकी गाँठें और परेशानियाँ डॉ० होमरलेनके समक्ष खोल सकत था। रोगीके मनमें अन्तर्द्वन्द्व होनेके कारण ही रोगकी उपस्थिति होती है। जब उस अन्तर्द्वन्द्वका अन्त हो जात है, तब रोगका भी अन्त हो जाता है। अन्तर्द्वन्द्व जबतक भीतर ही रहता है, तबतक रोगके बाहरी लक्षण नही दिखायी देते और जब वह बाहर आने लगता है, तब मानसिक रोगकी उपस्थिति होती है। जब चिकित्सक रोगीकी छिपी भावनाओंके प्रति सहानुभूति दिखलाता है, तब वे धीरे-धीरे अपने-आप बाहर आने लगती हैं उनके बाहर आनेपर उसके चेतन और अचेतन मनमे एकता स्थापित होना सरल हो जाता है। वास्तवमे चिकित्सकके समक्ष अपने गुप्त भाव प्रकाशित करने और उसके द्वारा सहानुभूति प्राप्त करनेसे ही रोग-निवारण हो जाता है।

सहानुभूति ऐसी ही अमोघ औषध है; पर खेद है हम अपने दैनिक जीवन और व्यवहारमें इस दैवी भावक

प्रयोगसे पागलतकको अच्छा कर सकते हैं, तब तो हम अपने दैनिक जीवनमें इर्द-गिर्द आनेवाले व्यक्तिको इसके प्रयोगसे क्यों नहीं अपना बना सकते? हमें चाहिये कि उदारतासे सहानुभूतिका प्रयोग करें और व्यक्ति एवं पीड़ित मानवताके दु:ख-दर्दको कम करते रहें।

कठोर व्यवहारसे मित्र भी शत्रु हो जाते हैं; पर सहानुभूतिपूर्ण व्यवहार और वातावरणसे पत्थर-हृदय भी पिघल उठते हैं। कठोरतासे अच्छा आदमी भी आपके विरुद्ध विद्रोह करनेको उतारू हो जाता है, पर सहानुभूतिसे गुप्त शत्रुताके भाव भी दूर हो जाते हैं। सहानुभूति एक दैवी गुण है। इसे विकसित कीजिये।

महान् पुरुषोंके पास पैसा नहीं होता, न वे इसकी इच्छा ही करते हैं; क्योंकि उनका दया और सच्ची सहानुभूतिसे लबालब भरा हृदय उनके पास कुबेरके भंडारकी तरह मौजूद रहता है।

कहते हैं इस दुनियामें गरीबका कोई ठिकाना नहीं। यह बात गलत है; क्योंकि गरीबी मानवता और सच्ची सहानुभूतिके दिव्य गुणोंको विकसित करनेवाली है। एक गरीब दूसरेके प्रति सच्ची सहानुभूति दिखा सकता है। ईश्वरके दर्शन कौन करेगा? वही जिसके पास सहानुभूतिपूर्ण संवेदनशील हृदय है, जो दूसरोंके दु:ख-दर्दमें काम आता है। कठोर व्यक्ति तो अपाहिज है; वह अपने समाजके इर्द-गिर्द रहनेवाले व्यक्तियोंतकसे प्रेम नहीं कर सकेगा। कोई उसके रंजो-गममें शामिल नहीं होगा।

जिनके हृदयमें दया और सहानुभूति है, वे कभी बिना मित्रोंके नहीं रहेंगे। इसलिये देखो और अपने मनमें सहानुभूतिको प्रथम स्थान दो, दूसरोंके प्रति प्रेम, दया और सहानुभूतिका व्यवहार करो।

तुम्हारे जीवनके जो क्षण व्यतीत हो रहे हैं, उनको मीठे प्रेममय सुन्दर और दूसरोंके प्रति सहानुभूतिपूर्ण विचारोंसे भरो।

दुखी और त्रस्त व्यक्तिको देनेके लिये यदि तुम्हारे पास रुपया नहीं है, तो सहानुभूतिके दो मीठे शब्द उसे दो; वह तुम्हारा हो जायगा।

बोध-कथा—

नियम-पालनका लाभ

एक गाँवमें एक साधु आये। उन्हें पता लगा कि गाँवमें एक ऐसा व्यक्ति है, जो किसी प्रकारके आचार-विचार, व्रत-नियमको मानता ही नहीं। साधुने उसे बुलवाया और समझाया—'जीवनमें कोई एक नियम अवश्य होना चाहिये। तुम कोई एक नियम बना लो—ऐसा नियम जो तुम्हें सबसे सुगम जान पड़े।'

वह व्यक्ति बोला—'मुझसे कोई नियम-पालन नहीं हो सकता, किंतु आप कहते ही हैं तो यह नियम बना लेता हूँ कि अपने घरके पास रहनेवाले कुम्हारका मुख देखकर ही भोजन करूँगा।'

साधुने स्वीकार कर लिया। साधु तो चले गये और उसका नियम भी चलता रहा, किंतु एक दिन उसे किसी कामसे कुछ रात्रि रहते ही घरसे दूर जाना पड़ा। जब वह लौटा तो दो पहर बीत चुका था। कुम्हार गाँवसे दूर मिट्टी खोदने चला गया था बर्तन बनानेके लिये। परंतु उसे अपना नियम-पालन करना था। वह कुम्हारकी खोजमें चल पड़ा; क्योंकि उसे भूख लगी थी और कुम्हारका मुख देखे बिना उसे भोजन करना नहीं था।

उस दिन मिट्टी खोदते समय कुम्हारको अशर्फियोंसे भरा घड़ा मिला। उस घड़ेकी अशर्फियोंको वह गधेकी बोरीमें भर रहा था, रात्रिमें ले जानेके लिये, इतनेमें यह व्यक्ति पहुँचा। कुछ दूरसे ही कुम्हारका मुख देखकर वह लौटने लगा। कुम्हारको लगा कि इसने उसे अशर्फी भरते देख लिया है। दूसरोंसे यह न बता दे, इस भयसे कुम्हारने उसे पुकारा और घड़ेका आधा धन उसे दे दिया।

एक साधारण नियमके पालनसे इतना लाभ हुआ, यह देखकर उसी दिनसे वह व्रतादि सभी धार्मिक नियमोंका पालन करने लगा।

श्रीमद्भगवद्गीताकी महिमा

इस माह श्रीगीता-जयन्ती है। भगवान् श्रीकृष्णका साक्षात् वाङ्मय-विग्रह, महानतम महाकाव्य महाभारतका हृदय तथा मानवमात्रके कल्याणका चिर प्रेरक अमोघ शास्त्र गीताका अध्ययन आज शिक्षाविदों, प्रशासकों, राजनेताओंके साथ-साथ बड़ी कम्पनियोंके मुख्य अधिशाषी अधिकारी एवं वरिष्ठ प्रबन्धक भी कर रहे हैं, ताकि वे अपने संस्थानोंमें सही एवं संतुलित निर्णय ले सकें। दुनियाके श्रेष्ठतम प्रबन्धकीय संस्थान, जैसे हारवर्ड बिजनेस स्कूल, कैलोग स्कूल ऑफ बिजनेस, रॉस स्कूल ऑफ बिजनेस आदिमें भगवद्गीताका पाठ्यक्रम पढ़ाया जा रहा है। आज यूनेस्कोने वैदिक मन्त्रोच्चारणकी पद्धतिको अन्तर्राष्ट्रीय धरोहर घोषित किया है। अनेकानेक भारतीय एवं विश्वके विद्वानोंने गीताकी मुक्तकण्ठसे प्रशंसा की है एवं उसकी महिमाको स्वीकारा है। उनमेंसे कुछ मनीषियोंके विचार निम्नांकित हैं—

❁ मैं गीताके आश्रयमें रहता हूँ। गीता मेरा श्रेष्ठ घर है। गीताके ज्ञानका सहारा लेकर मैं तीनों लोकोंका पालन करता हूँ।—**भगवान् श्रीकृष्ण**

❁ गीताका भलीभाँति श्रवण, कीर्तन, मनन एवं ध्यान करना चाहिये; क्योंकि यह स्वयं पद्मनाभ भगवान् श्रीकृष्णके मुखारविन्दसे निकली है। अन्य शास्त्रोंके विस्तारमें जानेकी क्या आवश्यकता है?—**महर्षि वेदव्यास**

❁ गीताशास्त्रका अर्थ जान लेनेपर समस्त पुरुषार्थोंकी सिद्धि होती है।—**जगद्गुरु श्रीआद्यशंकराचार्यजी**

❁ गीताको प्रतिदिन पढ़नेसे नये-नये भाव उत्पन्न होते रहते हैं, इससे यह सदैव नवीन बना रहता है एवं एकाग्रचित्त होकर श्रद्धा-भक्तिसहित विचार करनेसे इसके पद-पदमें परम रहस्य भरा हुआ प्रत्यक्ष प्रतीत होता है।

—**स्वामी श्रीविवेकानन्दजी**

❁ गीता उपनिषदोंके उपवनमें चुने हुए आध्यात्मिक सत्योंके सुन्दर पुष्पोंका एक अनुपम गुच्छा है।

—**स्वामी श्रीविवेकानन्दजी**

❁ गीता अक्षय मणियोंकी खान है। यदि युग-कर्णधार इसमेंसे सर्वदा नवीन-नवीन अमूल्य मणि-माणिक्य प्राप्तकर प्रसन्न और चकित होते रहेंगे।

—**योगी श्रीअरविन्दजी**

❁ गीता कहती है कि संसारसे पलायनकी आवश्यकता नहीं है। बाधा संसारमें नहीं, हमारे अन्दर है।

—**डॉ० एनी बेसेण्ट**

❁ गीता भारतकी प्राण-वायु है। गीताके कारण ही भारत जीवित रहेगा।—**भगिनी निवेदिता**

❁ श्रीकृष्ण भगवान्की वाणी गीता कोई सामान्य कविता नहीं है, अपितु वह तो अनहद नाद है। वह किसी कविकी कल्पित कविता नहीं है, तुम्हारे अन्दर बैठे हुए अज्ञानको नष्ट करनेवाली महौषधि है।

—**जम्भेश्वरजी महाराज**

❁ मेरा विश्वास है कि पृथ्वी-मण्डलकी प्रचलित भाषाओंमें भगवान् श्रीकृष्णकी कही हुई भगवद्गीताके समान छोटे वपुमें इतना विपुल ज्ञानपूर्ण दूसरा कोई ग्रन्थ नहीं है।

—**महामना मदनमोहन मालवीयजी**

❁ जीवन एवं जगत्की ऐसी कोई समस्या नहीं है, जिसका समाधान गीताके पास न हो।—**इमर्सन**

❁ गीताका उपदेश मनुष्योंको उन्नतिके शिखरपर पहुँचानेमें अद्वितीय है।—**वारेन हेस्टिंग्स**

❁ सबेरे उठते ही मैं अपने दिल, दिमाग और विवेकको गीतारूपी पवित्रतम गंगाजलसे स्नान कराता हूँ।

—**हेनरी थोरो**

❁ जब सन्देहका राक्षस आपको भयभीतकर मार्गच्युत करना चाहता है, तब प्रत्येक समय साक्षात् भगवान् श्रीकृष्णका आपके पास रहना कठिन है। इसी आवश्यकताकी पूर्तिके लिये भगवान्ने गीताद्वारा अनन्त संदेश दिये हैं।

—**लाला लाजपतराय**

❁ मेरे जीवनका कोई भी दिन ऐसा नहीं गया है, जिस दिन मैंने गीताके श्लोकोंपर मनन न किया हो।

—**लोकमान्य बालगंगाधर तिलक**

बल्कि सभी शिक्षण-संस्थाओंमें पढ़ाई जाय। जब कभी मुझे निराशा घेरती है और कहींसे कोई प्रकाश-किरण नहीं मिलती, तब मैं गीता-माताकी शरणमें जाता हूँ, गीताका कोई-न-कोई श्लोक चमकता हुआ समाधानके रूपमें आ जाता है और मैं मुसकुराने लगता हूँ। मेरा जीवन बाह्य कठिनाइयों एवं दु:खोंसे भरा पड़ा है, लेकिन उनका मेरे ऊपर कोई अमिट प्रभाव नहीं पड़ सका है, तो इसका श्रेय भगवद्गीताकी शिक्षाको ही जाता है।—**महात्मा गाँधी**

❀ माँके दूधपर मेरा शरीर जितना पला है, उससे कहीं अधिक मेरा हृदय एवं बुद्धि गीताके दूधसे पोषित हुए हैं।—**विनोबा भावे**

❀ गीता जीवनके सर्वोच्च लक्ष्योंको हृदयंगम करनेमें सहायता देती है। इसमें धर्मकी उन मूल धारणाओंपर जोर है, जो न केवल प्राचीन ही है, न केवल आधुनिक ही, बल्कि शाश्वत है।

—डॉ० सर्वपल्ली राधाकृष्णन

❀ गीतामें साधकके लिये उपयोगी सम्पूर्ण सामग्री है। गीताका मुख्य लक्ष्य मनुष्यमात्रका कल्याण करना है।

—स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज

❀ भारतके संविधानकी मूल प्रतिमें 'नीति-निर्देशक तत्त्वों' के चौथे अध्यायके पहले अर्जुनको गीताका उपदेश देते हुए भगवान् श्रीकृष्णका चित्र है।

—भारतका १९५० का संविधान

❀ इलाहाबाद उच्च न्यायालयके न्यायाधीशने एक महत्त्वपूर्ण निर्णय 'श्यामल रंजन मुखर्जी बनाम निर्मल रंजन मुखर्जी, ए०आई०आर० २००७, में केन्द्र सरकारसे कहा है कि वह संविधानके अनुच्छेद ५१ (क) मूल कर्तव्यके अन्तर्गत भगवद्गीताको राष्ट्रीय धर्मशास्त्र घोषित करे।

—न्यायमूर्ति शम्भूनाथ श्रीवास्तव

❀ गीता मानवताका सर्वोत्तम आध्यात्मिक ग्रन्थ है।—**अलबरूनी**

❀ गीताके उपदेश बिना किसी भेदभावके सबके लिये प्रयोजनीय हैं। इस ग्रन्थपर अहिन्दुओंका हिन्दू कहलानेवालेका है।—**डॉ० मोहम्मद हाफिज सैयद**

❀ गीता मानवमात्रके लिये शाश्वत प्रेरणाका स्रोत है। मैं निरन्तर विशेषतया कठिन परिस्थितिमें गीताक अध्ययन करनेपर संतुलित लाभ प्राप्त करता हूँ और गीतासे मेरी समस्याका समाधान हो जाता है।

—पूर्व राष्ट्रपति डॉ० अब्दुल कलाम

❀ मेरी अन्तरिक्ष-यात्रामें मेरे पास रखी गीत निरन्तर मेरा उत्साह बढ़ाती रही, तभी मैं १९५ दिनोंतक अन्तरिक्षमें रहनेका विश्व-कीर्तिमान् स्थापित कर सकी

—सुनीता विलियम्स

❀ ब्रिटिश सेनाके पहले हिन्दू पुरोहित होनेके नाते मैंने देखा कि ब्रिटिश सेनाको गीताका उपदेश देनेसे उनक मनोबल बढ़ा है तथा अब सेना युद्धके मैदानमें फलकी चिन्ता किये बिना अपने कर्तव्योंका पालन कर रही है।

—आचार्य कृष्णकान्त अत्री

❀ गीता सिर्फ व्यक्तियों या राष्ट्रविशेषका नहीं, बल्कि समग्र विश्वके संकट-निवारणहेतु अपरिहार्य ग्रन्थ है।

—इंडोनेशियाके राष्ट्रपति सुकर्ण

❀ गीता सच्चाईका मार्ग बतानेवाली, हकको पहचाननेवाली, गहरे भेदोंको खोलनेवाली, एकत दिखानेवाली, आनन्ददायिनी एवं विलक्षण कृति है।

—दाराशिकोह

❀ रामायण और महाभारत इस देशके राष्ट्रीय महाकाव्य हैं। इनको समझे बिना आप भारतसे एकात्म नहीं हो सकते।—**जिन्ना**

❀ गीता ७०० फूलोंकी माला है, एक फूलकी मालाकी खुशबूमें अजीब तासीर है। इस दिव्य मालाको पहनो तो दिल-दिमागपर अमिट प्रभाव छा जाता है।

—ख्वाजा दिल मुहम्मद

❀ हिन्दीमें मैंने रामायण, महाभारत और असंख्य किताबोंका अध्ययन किया, मगर जिस किताबने मेरे दिल एवं दिमागपर कब्जा कर लिया, जिसका नशा मुझे आजतक मालूम होता है, वह है श्रीमद्भगवद्गीता।

❀ गीता विश्वका अद्वितीय शास्त्र है। गीताके सात सौ श्लोकोंमें मुझे चौदह ब्रह्माण्डोंके रहस्य नजर आने लगे। मेरे सभी सवालोंके एकदम जवाब मिल गये। हर उलझनका सुलझाव मिल गया। हर अँधेरेका दीपक मिल गया। हर गुमराहीमें रहनुमा मिल गया। गीतामें मुझे सब कुछ मिल गया।—**रैहाना तैयबजी**

❀ गीता ऐसी अनमोल पुस्तक है, जो सभी मजहब तो क्या मनुष्यमात्रके पढ़नेकी जरूरी किताब है। इसका अध्ययन शिक्षण संस्थाओंमें प्रारम्भसे लेकर कॉलेजतक अनिवार्य होना चाहिये। हकीकत तो यह है कि श्रीमद्भगवद्गीता भारतकी सही पहचान है।

—**न्यायाधीश महामहिम बेग साहब**

❀ गीता ग्रन्थ इतना अमूल्य है और अध्यात्म भावमें पूर्ण है कि मैं समय-समयपर भगवान्‌से प्रार्थना करता आया हूँ कि मुझपर इतनी दया करें और शक्ति प्रदान करें, जिससे मैं मृत्युपर्यन्त इस संदेशको एक स्थानसे दूसरे स्थानतक पहुँचा सकूँ।

—**साधु टी०एल० वासवानी**

❀ श्रीमद्भगवद्गीता एक सार्वभौमिक ग्रन्थ है। यह मानवके लिये अनादि पथ-प्रदर्शक है। यह उसे असत्यसे सत्यकी ओर, तमसे ज्योतिकी ओर, मृत्युसे अमरताकी ओर ले जाती है।—**स्वामी शिवानन्द**

❀ गीता शाश्वत दर्शनके कभी भी रचे गये स्पष्ट और सबसे सर्वांग सम्पूर्ण सारांशोंमें एक है। इसलिये न केवल भारतीयोंके लिये अपितु सम्पूर्ण मानव जातिके लिये इसका स्थायी मूल्य है। सम्भवत: भगवद्गीता शाश्वत दर्शनका सबसे अच्छा सुसंगत आध्यात्मिक विवरण है।—**नोबेल पुरस्कारप्राप्त जीवविज्ञानी इक्सले**

❀ संसारमें जितने भी ग्रन्थ हैं, उनमें भगवद्गीता-जैसे सूक्ष्म और उन्नत विचार कहीं नहीं मिलते।

—**वैज्ञानिक हुम्बोल्ट**

❀ गीताको भुला देनेके कारण ही भारत गुलाम हुआ, अन्यथा गीताका देश कभी गुलाम नहीं हो सकता।—**बर्गसाँ**

❀ यदि हम पारदर्शक व्यक्तित्व, हृदयकी सरलता और बुद्धिकी गहनताको खो बैठे होंगे, तो गीता हमारे लिये गुह्य और न समझने-जैसा ग्रन्थ है। विचारोंसे विद्वान् एवं आचारसे सज्जन ऐसा विचार-आचारका समन्वय साधा हुआ व्यक्ति ही गीताको पढ़नेका सच्चा अधिकारी है। हिमालय जितनी बुद्धिकी उत्तुंगता (ऊँचाई) और सागर जितनी भावकी गहराईको जिसने एक साथ जीवनमें साध्य किया हो, वही व्यक्ति गीता-जैसे उत्कृष्ट ग्रन्थका वक्ता बन सकता है।

—**परम पूज्य श्रीपाण्डुरंग शास्त्री आठवले**

❀ श्रीमद्भगवद्गीता हमारे धर्मग्रन्थोंमें एक अत्यन्त तेजस्वी और निर्मल हीरा है। पिण्ड-ब्रह्माण्डादि ज्ञानसहित आत्म-विद्याके गूढ़ और पवित्र तत्त्वोंके आधारपर मनुष्य मात्रपुरुषार्थकी अर्थात् आध्यात्मिक पूर्णावस्थाकी पहचान करा देनेवाला, भक्ति और ज्ञानका मेल कराकर इन दोनोंका शास्त्रोक्त व्यवहारके साथ संयोग करा देनेवाला और इनके द्वारा संसारके दु:खित मनुष्योंको शान्ति देकर उसे निष्काम कर्तव्यके आचरणमें लगानेवाला, गीताके समान बाल-बोध ग्रन्थ संस्कृतके अतिरिक्त समस्त संसारके साहित्यमें नहीं मिल सकता।

—**पूज्य श्रीलोकमान्य बालगंगाधर तिलक**

❀ गीतामें दार्शनिक और धार्मिक विचारकी अनेक धाराएँ अनेक ढंगोंसे घुमा-फिराकर एक जगह मिलायी गयी हैं। इन्हें अनेक परस्पर-विरोधी दीख पड़नेवाली विश्वासोंकी एक सीधी-सादी एकतामें गूँथ दिया गया है, जिससे वे सच्ची हिन्दू भावनासे उस कालकी आवश्यकताको पूरा कर सकें और इन विश्वासोंसे ऊपर इस भावनामें परमात्माकी चारुता बिखेर दी गयी है।—**डॉ० राधाकृष्णन**

[**संकलन—स्वामी श्रीसंवित्सुबोधगिरिजी**]

तीर्थ-दर्शन—

कश्मीरका शंकराचार्य-मन्दिर

(श्रीबलविन्दरजी 'बालम')

भगवान् शंकरके अवतार जगद्गुरु आदि शंकराचार्यने बौद्धादि अन्यान्य मतावलम्बियोंको परास्तकर सनातन धर्मकी पताका दिग्-दिगन्तमें फहरायी। आपने सम्पूर्ण भारतवर्षकी पदयात्रा करते हुए धर्मप्रचार तथा अनेक देवविग्रहोंका पुनरुद्धार भी किया। कश्मीरमें श्रीनगरके निकट जिस प्राचीन शिवालयमें उन्होंने तपस्या की थी, वह उन्हींके नामपर शंकराचार्य-मन्दिरके नामसे प्रख्यात हो गया। शंकराचार्य-मन्दिर श्रीनगरसे ४ किलोमीटर दूर एक पहाड़ीकी चोटीपर स्थित दर्शनीय स्थान है। इसे ज्येष्ठेश्वर मन्दिर भी कहा जाता है। यह मन्दिर श्रीनगरके प्रत्येक भागसे देखा जा सकता है और इसकी ऊँचाई १००० फुट है। इस मन्दिरकी चोटीसे सारा श्रीनगर (कश्मीर) नजर आता है। सुदूर पहाड़ियोंके बीच स्थित तथा डल झीलकी भव्यता तथा विशालतासे समन्वित यह मन्दिर आध्यात्मिकताका पर्याय हो जाता है। डल झीलमें शिकारेमें बैठकर भी इस मन्दिरका अद्भुत नजारा देखा जा सकता है। पहाड़ीके सिरपर शोभायमान इस मन्दिरका दूरसे केवल ऊपरी भाग ही नजर आता है। इस मन्दिरमें शंकराचार्यकी मूर्ति शोभायमान है, साथमें उनका एक ग्रन्थ भी है। मन्दिरमें तथा अलग एक छोटेसे साधना-कक्षमें उनकी मूर्तियाँ शोभायमान हैं। इस मन्दिरपर खड़े होकर आप सारे शहरका दृश्य देख सकते हैं। यहाँ जानेके लिये दो रास्ते हैं, एक जो दुर्गानाग दफ्तरसे जाता है और साढ़े तीन कि०मी० की चढ़ाई है। इस रास्तेसे जाकर आपको एक विशेष आनन्द मिलेगा और सैर भी हो जायगी रास्तेमें आप डल झील, चारमीनार, मुगलबागोंके दृश्य भी देखते रहेंगे।

गोपाद्रि या गुपकार टीलेको शंकराचार्य पर्वत भी कहते हैं। समुद्रतलसे ६२४० फुट ऊँची यह पहाड़ी श्रीनगरके उत्तर-पूर्वमें स्थित है। इसके साथ ही जबरवान पहाड़ियोंके नीचे डल झील है, उत्तरमें जेठनाग और दक्षिणमें झेलम नदी है। यह मन्दिर डोरिक निर्माण पद्धतिके आधारपर पत्थरोंका बना हुआ है। इसके सम्बन्धमें कई विद्वानोंका कहना है कि इसकी नींव २०० ई० पूर्व अशोकके सुपुत्र महाराजा जन्तूकने डाली थी। इसकी मरम्मत समय-समयपर यहाँके कई राजाओंने करायी है। तथापि वर्तमान मन्दिर सिख राजकालके राज्यपाल शेख मुहीउद्दीनकी देन है। इन्होंने ही यहाँ शिवलिंग स्थापित किया और इस मन्दिरको शंकराचार्य मन्दिर कहा जाने लगा है। इस नये मन्दिरके निर्माणका आदेश उस समयके महाराज रणजीतसिंहने दिया था। उनके राज्यकालमें हिन्दू-सिक्ख और मुसलमानमें कोई भेद नहीं होता था और सब धर्मोंका एक समान आदर होता था।

इसके सम्बन्धमें यह भी मत है कि सन् ८२० ई० में शंकराचार्यने कश्मीर आकर इसी पहाड़ीपर तपस्या की थी। दुर्गानागकी तरफसे महाराजा गुलाब सिंहने सन् १९२५ ई० में इस मन्दिरतक पहुँचनेके लिये पत्थरोंकी ४१ सीढ़ियाँ बनवायी थीं। दूसरी सड़क नेहरूपार्कसे जाती है और ५ कि०मी० लम्बी है। आप बस या टैक्सीसे सड़कके द्वारा मन्दिरतक जा सकते हैं। सन् १९७४ में यहाँ टेलीविजन टॉवर लग गया और बहुतसे सैनिक कैम्प लग गये हैं। सैनिक कैम्पोंकी फोटो खींचनेका निषेध है। यहाँके दर्शन करनेके लिये शाम ६ बजेसे पहले ही जाना चाहिये; क्योंकि रातको ऊपर नहीं जाने दिया जाता।

जीवनका यथार्थ—सतत सुकर्मशीलता

(श्रीपीयूषकुमारजी त्रिपाठी)

जीवनके वास्तविक लक्ष्यको पानेका साधन सतत सुकर्मशीलता ही है। सतत क्रियाशीलता ही सफलताका आधार है। जो निष्क्रिय है, कुछ नहीं करता, हाथ-पैर नहीं हिलाता, आलसमें पड़ा रहता है; वह वास्तविक अर्थोंमें जीवित भी नहीं कहा जा सकता। फिर सफल क्या होगा ?

यह ठीक है कि सफलताकी शुरुआत मनुष्यके आन्तरिक जीवनमें ही होती है। पहले मनमें सफलताके उपयुक्त मनोभूमिका निर्माण होता है, समस्त महान् कार्य विचारक्रमके रूपमें मानस-पटलपर उदित होते हैं, फिर धीरे-धीरे बाह्य जगत्में उनका प्रादुर्भाव होता है।

किसी कार्यकी योजना बनाना, लम्बी-चौड़ी बातें सोचना एक बात है और उसे वास्तविक जीवनमें कार्योंद्वारा अभिव्यक्त करना बिलकुल दूसरी बात है। अनेक व्यक्ति यह गलती करते हैं कि अपनी समस्त शक्तियाँ सोचने-विचारने, योजना निर्मित करनेमें लगा देते हैं, वस्तविक संसारमें प्रत्यक्ष कर दिखानेका उन्हें अवसर ही प्राप्त नहीं होता। ठोस परिश्रम करनेकी उन्हें आदत नहीं होती। संसारमें इतनी आवश्यकता बात-चीत, योजनाओं, जबानी जमा-खर्चकी नहीं है, जितनी कार्यकी। जो विचार कार्यरूपमें परिणत हो गया, वह जीवित विचार कहा जायगा। जिन विचारों, योजनाओंपर अमल नहीं हुआ, जिन्हें प्रत्यक्ष जीवनमें नहीं उतारा गया, वह मृतप्राय है। उनपर व्यय की गयी शक्ति व्यर्थ ही है।

क्रियात्मक कार्य ही संसारका निर्माण करता है। सफल व्यक्ति अपने आन्तरिक विचार तथा बाह्य कार्यमें पर्याप्त समन्वय करनेकी अपूर्व क्षमता रखते हैं। उनके पास क्रियात्मक विचारोंकी शक्ति रहती है। वे अपने विचारोंको जीवन देते हैं अर्थात् निरन्तर उनपर कार्य करते हैं और प्रत्यक्ष जीवनमें उतारते हैं। ***'पर उपदेस कुसल बहुतेरे'***—इस कथनमें भी कार्यकी महत्ता और ऊपरी उपदेशकी मूर्खतापर व्यंग्य है। दूसरोंको उपदेश देनेवाले—बड़ी-बड़ी बातें करनेवाले बहुत-से लोग मिलेंगे, जिनके

इच्छाओंका सागर जब हिलोरें लेता है, तब वह कल्पनाके मादक आकर्षणके साथ अनेक बातें कहत है। हम कल्पनाके लम्बे हाथोंसे संसारका सब कुछ पकड़ लेना चाहते हैं। संसारकी कठोर चट्टानोंक जिनपर सृष्टिके अगणित व्यक्तियोंकी कोमल महत्त्वाकांक्षाएँ टूट चुकी हैं, हमें ज्ञान नहीं रहता। कामनाएँ नित्य ही हाथ फैलाती हैं, पर संसारकी सीमाएँ और हमारी मजबूरियाँ हमें जहाँ-की-तहाँ रहने देती हैं। कामनाएँ उतनी ही सिद्ध होती हैं, जितनी कर्ममें परिवर्तित हो जाती हैं।

जबतक जीवनमें अनुभवजन्य ज्ञानकी कमी है, तबतक मनुष्य स्वप्नोंके मनोरम लोकमें विहार करत रहता है, परंतु जैसे-जैसे उसे संसारकी बाधाओंका ज्ञान होता है, वैसे-वैसे उसे प्रतीत होता है कि कल्पनाओं और योजनाओंका जो रूप उसने प्रारम्भमें कल्पनाके नेत्रोंसे देखा था, वास्तवमें वह वैसा नहीं है। अनुभव कर्मसे प्राप्त होता है और कर्मके साथ ही जीवनमे सफलता जुड़ी रहती है।

संसारमें जो कुछ शिव और सुन्दर दृष्टिगोचर होत है, वह मनुष्यकी श्रमशीलताका ही सुफल है। कला-कौशलकी सारी उपलब्धि श्रमके आधारपर ही होती है यदि मनुष्यने श्रमको न अपनाया होता, तो वह भी अन्य प्राणियोंकी तरह पिछड़ी स्थितिमें पड़ा रहता। मनुष्यको छोड़कर संसारके सभी प्राणी आज भी उसी आदि स्थितिमें रह रहे हैं, जिसमें वे सृष्टिके आरम्भमें थे मनुष्यकी प्रगतिका कारण उसकी श्रमशीलता ही है।

कला-कौशलकी बड़ी-बड़ी सिद्धियाँ श्रमहीनत एवं अभ्यासशून्यतासे मृतप्राय हो जाती हैं। कहा गय है—

करम प्रधान बिस्व करि राखा। जो जस करइ सो तस फलु चाखा।
सकल पदारथ एहि जग माहीं। कर्महीन नर पावत नाहीं।

वास्तवमें संसारमें जो सफल व्यक्ति हुए हैं, उनके पास भी एक दिनके लिये चौबीस घंटे ही निर्धारित रहे

व्यक्तिको पूर्णत: सफल कर सकें। सफलताके सन्दर्भमें विवेकानन्दजीका कथन है—'सफल जीवनका अर्थ यह नहीं कि हम जीवनमें क्या पाये, बल्कि जीवनकी वास्तविक सफलता इसमें निहित है कि हम कैसे जिये और क्या किये।' वास्तविक प्रेरक शक्ति हमारे अन्दर ही विद्यमान है और हम उस कस्तूरी मृगकी तरह उसे यत्र-तत्र ढूँढ़नेमें लगे हुए हैं और उसीमें अपने अमूल्य क्षणको नष्ट करते हुए एक तरहसे अपने मानव-जीवनको ही व्यर्थ कर देते हैं।

साधन धाम मोच्छ कर द्वारा। पाइ न जेहिं परलोक सँवारा॥
सो परत्र दुख पावइ सिर धुनि धुनि पछिताइ।
कालहि कर्महि ईस्वरहि मिथ्या दोस लगाइ॥

चौरासी लाख योनियोंमें भ्रमण करनेके उपरान्त यह देवदुर्लभ मानव-शरीर हमें प्राप्त हुआ है। इसकी वास्तविक सफलता उस परमानन्द परमात्मामें विलीन हो जाना ही है। जिस प्रकार सोना तपानेपर अधिक चमकदार बन जाता है, उसी प्रकार व्यक्ति अपने शरीरको जितना तपाता है, वह जीवनको उतना ही उज्ज्वल बनाता है। । गोस्वामी तुलसीदासजीने अपने महान् ग्रन्थ 'रामचरितमानस' में कर्मशीलताके संघर्षको ही इन रूपोंमें व्यक्त किया है—

तपबल रचइ प्रपंचु बिधाता। तपबल बिष्नु सकल जग त्राता।
तपबल संभु करहिं संघारा। तपबल सेषु धरइ महि भारा।
तप अधार सब सृष्टि भवानी। करहि जाइ तपु अस जियँ जानी।

इस सम्पूर्ण सृष्टिका आधार ही श्रमशीलता है। यह श्रमशीलता अच्छे और बुरे दोनों रूपोंमें हो सकती है। सम्भव है कि अच्छे कार्योंमें सफलता विलम्बसे प्राप्त हो और बुरे कार्यमें त्वरित सफलता मिल जाय, किंतु अच्छे कार्योंमें प्राप्त सफलता ही जीवनकी वास्तविक सफलता है। जीवनपर्यन्त अच्छे कार्योंको करते रहना और बुरे कार्योंको प्रश्रय न देना ही वास्तविक धार्मिक होनेका लक्षण है और जीवनकी यथार्थता एवं सार्थकता भी।

बोध-कथा—

महल नहीं, धर्मशाला

महाराज जीमूतकेतुके ऐश्वर्यका पार नहीं था। उन्होंने देवराज इन्द्रकी उपासना करके कल्पवृक्ष प्राप्त किया था। उनका राजभवन इतना भव्य था कि देवता भी उसे देखकर मुग्ध हो उठते थे। एक धार्मिक नरेश सांसारिक वैभवमें ही आसक्त रहे और मनुष्य-जीवन व्यर्थ व्यतीत कर दे, यह योग्य कार्य नहीं है। धर्मका सच्चा फल तो भोगोंसे विरक्ति तथा मोक्षकी प्राप्ति ही है। भगवान् दत्तात्रेयको दया आ गयी राजा जीमूतकेतुपर। वे मलिन वस्त्र पहने, केश बिखराये, धूलिधूसर अवधूत वेशमें आये और राजभवनमें राजाके पलंगपर ही जा विराजे।

राजसेवक डरे; किंतु आगत आगन्तुक जो कि एक पागल जान पड़ता था, उसके मुखका तेज कुछ ऐसा था कि कोई सेवक उसे रोकने या हटानेका साहस नहीं कर सका। अपनी शय्यापर एक उन्मत्त भिखारीको बैठे देखकर राजा जीमूतकेतु क्रोधसे लाल हो उठे। वे उसके पास आकर बोले—'तू कौन है? यहाँ राजभवनमें क्यों घुस आया? निकल यहाँसे।'

अवधूत दत्तात्रेय बड़ी निश्चिन्ततासे बोले—'भाई! अप्रसन्न क्यों होते हो? यह तो धर्मशाला है। तुम भी इसमें ठहरो, मैं भी ठहरता हूँ।' 'यह मेरा राजभवन है, धर्मशाला नहीं। समझे! चलो, बाहर जाओ!' राजाने डाँटा। अवधूत—'तो इसमें सदासे—हजार-दो-हजार वर्षसे तुम्हीं हो?' राजा—'कैसा पागल है, मुझे तो जन्म लिये अभी पचास वर्ष हुए।' अवधूत—'उससे पहले इसमें कौन था?' राजा—'मेरे पूज्य पिता।' अवधूत—'वे कहाँ गये? कब लौटेंगे?' राजा—'उनका शरीरान्त हो गया। वे अब कभी नहीं लौटेंगे।'

अवधूतने इसी प्रकार कई बार पूछा और राजाने बताया कि पितासे पूर्व पितामह, उनसे पूर्व प्रपितामह उस भवनमें रहते थे। अवधूत हँसे और बोले—'भले आदमी! जहाँ मनुष्य आकर कुछ काल ठहरकर चला जाय, फिर न लौटे वह धर्मशाला नहीं, तो है क्या?'

परिग्रहसे परिताप

(श्रीताराचन्दजी आहूजा)

विश्व एक है, सबमें एक ही आत्मतत्त्व है, सबमें उसी अद्वैत सत्ताकी उपस्थिति है और हम सब जीव उसी परम सत्ताके, अविनाशी परम तत्त्वके अंश हैं—***'ईस्वर अंस जीव अबिनासी।'*** जब अंश और अंशी एक स्वर हो जायँगे तो अंशमें अंशीके गुणोंका प्राकट्य होना स्वाभाविक है। हमारे भीतर जितना-जितना अंशीके गुणोंका विस्तार होता जायगा, हम उतना-उतना उसके स्वरूपमें परिणत होते जायँगे।

हम उस भगवत् सत्ताके अंश हैं, जो अखण्ड स्वास्थ्यका अकूत भण्डार है और उसका प्रमुख गुण है देना, देना और देना। हमारा भगवान् कभी बीमार नहीं पड़ता; क्योंकि उसमें देनेका अनूठा गुण है। दूसरी ओर हम उसके अंश होते हुए भी रोगग्रस्त रहते हैं, ऐसा क्यों है ? उत्तर स्पष्ट है—हमने देनेके स्थानपर बटोरनेकी राह पकड़ ली है। हम लेते ही जाते हैं, परंतु देनेका नाम नहीं लेते। परिग्रहसे परितापका उदय होता है, यह बात हमें समझनेकी आवश्यकता है। जबतक यह कटु सत्य हमारी बुद्धिमें नहीं उतरेगा, हम कभी स्वस्थ नहीं रह सकते। हम रोगोंसे घिरे रहेंगे। यह शाश्वत सत्य है।

सन्त और शास्त्र कहते हैं कि देना और पाना सृष्टिका आधारभूत नियम है। हम इस अकाट्य सिद्धान्तकी अवहेलना नहीं कर सकते। यदि हम देनेके नियमकी अवमानना करेंगे, तो हमारा प्राप्तिका मार्ग अवरुद्ध हो जायगा। आज हमें वही मिल रहा है, जो विगतमें हमने दिया है। बिना दिये कुछ भी नहीं मिल सकता। प्रकृतिमें क्रिया-प्रतिक्रियाका सिद्धान्त काम कर रहा है। यहाँ सब हिसाबसे चल रहा है, बेहिसाब कुछ भी नहीं है। सन्त कूटस्थानन्दजीका कथन है कि 'यहाँ पाई-पाईका हिसाब है, राई-राई का हिसाब है। तुम संसारकी आँखोंमें धूल झोंक सकते हो, परंतु भगवान्की आँखोंमें नहीं।' हमारी स्वार्थपरताका सबसे प्रथम प्रभाव हमारे स्वास्थ्यपर ही पड़ता है।

देकर पाना ही शाश्वत नियम है। देनेसे पानेका हैं कि देना पानेके लिये स्थान खाली करता है श्रीरामचरितमानसमें भगवान् शिव श्रीरामसे कहते हैं—'लोग अनेक रोगों और प्रियजनोंके वियोगसे दुखी हैं यह आपके चरणोंके निरादरका फल है—

बहु रोग बियोगन्हि लोग हए।
भवदंघ्रि निरादर के फल ए॥

(रा०च०मा० ७। १४।९ छंद)

यहाँ 'भवदंघ्रि निरादर' शब्दका प्रयोग हुआ है, जो कठोरताका प्रतीक है। हमें विचार करना चाहिये कि प्रकृतिके नियम कठोर हैं। प्रकृतिके दो नियम हैं—आदान-प्रदान और क्रिया-प्रतिक्रिया। इन दोनों नियमोंक पालन न करना ही प्रभुके चरणोंका निरादर है और यही पाप है। अतः परिग्रहसे रोग अथवा दुःखका आन स्वाभाविक है। इसीलिये श्रीरामचरितमानसमें काकभुशुण्डिजी कहते हैं—

करहिं पाप पावहिं दुख भय रुज सोक बियोग॥

(रा०च०मा० ७। १०० क)

पाप शब्दमें दो अक्षर हैं—'प' और 'अप'। 'प' का अर्थ है पालन करनेवाला और 'अप' का अर्थ है दूर अर्थात् पालनकर्ता भगवान्से दूर होना ही पाप है रुज शब्दका अर्थ है रोग। जो रोगी है, वह पापी है कहनेका तात्पर्य यह है कि हम भगवान्के निमित्त देने लग जायँगे तो हमारे पाप समाप्त होने लगेंगे और तब रोगमुक्तिका होना स्वाभाविक हो जायगा।

महापुरुषोंका कथन है कि भगवान् स्वास्थ्यक अखण्ड स्रोत हैं। देनेसे भगवान् प्रसन्न होते हैं, जिससे हम स्वस्थ रहते हैं। जो जीवनमें केवल पाना-ही-पान चाहते हैं, प्रकृति उन्हें दण्डित करती है। उन्हें भी देन पड़ता है, पर कष्ट भोगकर डॉक्टरको। जो धनक केवल संचय करता है और वितरण नहीं करता, वह हृदय रोगोंसे पीड़ित होता है। प्रकृतिका नियम है कि जब हम देते नहीं तो हमसे 'कुछ' छीन लिया जाता है और वह 'कुछ' प्रायः हमारा स्वास्थ्य होता है। यह कोई

हमारे ऋषि-मुनियोंने जाना था। हमारे पूर्वज अपनी आय और उत्पादोंका दशांश निकाला करते थे।

अपरिग्रहका सिद्धान्त एक सर्वव्यापक, सार्वकालिक एवं सार्वदेशिक सत्य है। इसको पुराणोंमें भी अंतिम यमके रूपमें महत्त्वपूर्ण स्थान मिला है। परिग्रहका मूल कारण ममत्व, आसक्ति या तृष्णा है। यह उक्ति प्रसिद्ध है—**'न तृष्णायाः परो व्याधिः न सन्तोषात्परं सुखम्।'** अर्थात् तृष्णासे बड़ी कोई व्याधि नहीं एवं सन्तोषसे बड़ा कोई सुख नहीं। तृष्णा द्रौपदीके चीरके समान है, जो परित्यागके बाद ही समाप्त होती है। यह बिना पालके तालाब-जैसी है, जिसमें कितना भी पानी आ जाय, वो भरता नहीं है। परिग्रहके इस मूल कारणको समाप्त करनेका निर्देश हमारे धर्मशास्त्रों-वेदों, पुराणोंमें विस्तारसे दिया गया है।

ब्रिटेनके महान् दार्शनिक और चिन्तक जॉन रस्किनका कथन है कि जो भगवत्सेवाके निमित्त कुछ न निकालकर अपने ऊपर ही खर्च करता है, वह भगवान्‌को कोई स्थान नहीं देता, जिसका दण्ड उसको भोगना पड़ेगा। वही धन धन्य है, जिससे प्राथमिकतासे भगवान्‌का अंश निकाला जाय। मानसमें संतशिरोमणि गोस्वामी तुलसीदासजी कहते हैं—

सो धन धन्य प्रथम गति जाकी।

ज्ञानीजन कहते हैं कि हमारे जीवनमें देनेका सिलसिला नियमित रूपसे चलते रहना चाहिये। देनेसे समस्त दुःखोंके बन्धन कटते हैं और आनन्दकी प्राप्ति भी होती है। अमेरिकाके विश्वप्रसिद्ध धनवान् जॉन डी० रॉकफेलर जवानीमें एक नौजवान किसानकी तरह स्वस्थ और गठीले शरीरके स्वामी थे। अपने कठिन परिश्रमकी बदौलत उन्होंने तैंतीस वर्षकी छोटी-सी अवस्थामें ही दस लाख डॉलर कमा लिये थे। ४३ वर्षकी आयुमें उनका दुनियाके सबसे बड़े व्यवसायपर नियन्त्रण स्थापित हो गया। मात्र ५३ वर्षकी आयुमें वे विश्वके सबसे बड़े धनवान् व्यक्ति बन गये।

कुछ समय बाद उन्हें गंजेपनका रोग लगा। उनका हाजमा भी इतना खराब हो गया कि भोजन पचानेमें परेशानी होने लगी। वे रातको सो नहीं पाते थे और हर समय बेचैनी-सी रहती थी। डॉक्टरोंसे काफी इलाज कराया, पर कोई लाभ नहीं हुआ। सभीको ऐसा लगने लगा कि रॉकफेलर अब अधिक समयतक जिन्दा नहीं रहेंगे। रॉकफेलरने अपनी इस दयनीय दशाको देखकर एक रात सोते समय यह विचार किया कि अब जब उसका जीवन कुछ महीनोंका ही रह गया है और यह सारी धन-सम्पदा यहींपर धरी रह जायगी और वे अपने साथ एक कौड़ी भी नहीं ले जा पायेंगे, तो क्यों न इस धनका उपयोग परहितमें किया जाय। ऐसा सोचकर उन्होंने अविलम्ब 'रॉकफेलर प्रतिष्ठान' की स्थापना की, ताकि उनके धनका परहितमें उपयोग हो सके। उस प्रतिष्ठानके माध्यमसे उन्होंने विश्वविद्यालयों, अस्पतालों, अपाहिजों एवं निर्धनोंकी सहायताके लिये बनाये गये संस्थानोंको लाखों डॉलरका अनुदान दिया। उन्होंने ही दक्षिण अमेरिकाको सबसे बड़ी आर्थिक एवं भौतिक विपत्ति—अंकड़ी नामक एक हानिकारक कीड़ेसे छुटकारा पानेमें सहायता दी। उन्हींके अनुदानसे पेन्सलीनके टीकेकी खोज सम्भव हो सकी।

जब वे दूसरोंके बारेमें सोचने लगे, तो एक चमत्कार हुआ, उन्हें नींद आने लगी, वे सामान्य रूपसे खाने-पीने लगे और जीवनका सामान्य आनन्द उठाने लगे। उनके जीवनमेंसे स्वार्थपरताकी कड़वाहट निकल गयी और पुनर्जीवन प्रदान करनेवाली ईश्वरीय प्रेमकी धाराएँ फूट पड़ीं। परिणाम यह हुआ कि वे शीघ्र ही पूर्णतया रोगमुक्त हो गये। तब उन्हें यह अहसास हुआ कि परिग्रहमें परिताप है, आनन्द नहीं। जब हमें ईश-कृपासे धन मिलता है, तो वह सारा-का-सारा केवल हमारे लिये ही नहीं होता, उसमें दूसरोंका भी हिस्सा होता है और जबतक हम दूसरोंका हिस्सा वितरित नहीं करेंगे, हम शान्ति और आनन्दसे नहीं रह पायेंगे। अब हम देख रहे हैं कि अमेरिकाके वारेन बफेट और बिल गेट्स-जैसे अमीर घराने रॉकफेलरके पद-चिह्नोंपर चलते हुए अपनी धन-सम्पदाका नब्बे प्रतिशतसे भी अधिक अंश परहितके कार्योंमें निवेशित कर रहे हैं। धनका इससे बड़ा उपयोग और कुछ नहीं हो सकता। यह बात उनकी समझमें आने लगी है।

सन्त-चरित—

छत्तीसगढ़के सन्त गुरु घासीदासजी

(डॉ० श्रीप्रदीप कुमारजी शर्मा)

छत्तीसगढ़की सन्त-परम्परामें गुरु घासीदासजीका नाम श्रद्धापूर्वक स्मरण किया जाता है। उनका जन्म १८ दिसम्बर सन् १७५६ ई० को गिरौदपुरीमें हुआ था। यह गाँव वर्तमान छत्तीसगढ़ राज्यके बलौदाबाजार जिलेमें आता है। उनके पिताजीका नाम श्रीमहँगूदास तथा माताजीका नाम श्रीमती अमरौतिन था।

सन्त गुरु घासीदासजीका जन्म ऐसे समयमें हुआ था, जब इस क्षेत्रमें अराजकताकी स्थिति व्याप्त थी। धर्मके नामपर समाजमें कर्मकाण्ड, तन्त्र-मन्त्र, जादू-टोना एवं बलिप्रथाका बोलबाला था। शिक्षाके लिये पर्याप्त सुविधाओंके अभाव तथा एक सामान्य कृषि श्रमिक परिवारमें जन्म लेनेवाले गुरु घासीदासजीने विधिवत् स्कूली शिक्षा नहीं पायी थी। वे बाल्यावस्थामें अन्य हमउम्र बच्चोंसे भिन्न थे। उनके पास एक संवेदनशील हृदय था। उनसे किसी भी जीवमात्रका दु:ख नहीं देखा जाता था।

गुरु घासीदासजीके माता-पिता धार्मिक विचारोंके थे। इसका प्रभाव बालक घासीदासजीपर भी पड़ा और वे बचपनसे ही मांसाहार, नशाखोरी, अस्पृश्यता, पशुबलि एवं अन्य कुप्रथाओंका विरोध करते रहे। बालक घासीदासजीका हृदय सात्त्विक विचारोंसे ओत-प्रोत था। उनके बाल मनपर छोटी-छोटी धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक घटनाओंका भी गहरा असर होता था। वे उस घटनासे विचलित हो उठते और उसके कारणको जाननेका प्रयत्न करते। वे बहुत ही गम्भीर तथा जिज्ञासु स्वभावके थे।

घासीदासजीके किशोर मनमें अनगिनत प्रश्न उठते रहते। इन जटिल प्रश्नोंके उत्तर जाननेहेतु वे हमेशा विचारमग्न रहते, चिन्तन-मनन करते, सन्तोषजनक उत्तर नहीं निकलनेपर विचलित-से हो जाते। माता-पिता एवं गाँवके बुजुर्ग लोग भी उनके प्रश्नोंको सुनकर निरुत्तर हो जाते थे। उनकी बढ़ती हुई वैराग्य-प्रवृत्तिको देखकर उनके माता-पिताने उनका विवाह सिरपुर निवासी सम्पन्न कृषक उनके यहाँ चार पुत्र और एक पुत्री हुई। चारों पुत्रोंके नाम थे—अमरदास, बालकदास, आगरदास, अड़गढ़ियादास और सुपुत्री सुभद्राबाईजी थीं।

विवाहोपरान्त भी गृहस्थ कर्तव्योंका भार वहन करते हुए अन्धविश्वाससे जकड़े विषमताग्रस्त समाजके सम्बन्धमें उनका विचार-प्रवाह एवं आचरण यथावत् बना रहा। एक बार जब घासीदासजी शान्तिकी खोजमें अपने भाईके साथ जगन्नाथपुरी (उड़ीसा) जा रहे थे, तो अचानक सारंगगढ़से वापस लौट आये। उन्हें ऐसा बोध हुआ कि मनकी शान्तिके लिये मठों और मन्दिरोंमें भटकनेसे अच्छा है कि मनके भीतर ही उपाय ढूँढ़ा जाय। इसके लिये एकान्तवासकी आवश्यकता थी। उन्होंने गिरौदके समीप छातापहाड़पर औंरा-धौंरा वृक्षके नीचे तपस्याकर 'सतनाम'को आत्मसात् किया। इस विलक्षण अनुभूतिसे जन-जनको परिचित करानेके लिये वे अग्रसर हो गये।

भण्डारपुरी आकर गुरु घासीदासजी सतनामका उपदेश देने लगे। उनके सात वचन सतनाम पन्थके **'सप्त-सिद्धान्त'** के रूपमें प्रतिष्ठित हैं। उन्होंने लोगोंसे कर्मयोगके सिद्धान्तको अपनानेका आह्वान किया। उनका ऐसा मानना था कि गृहस्थाश्रममें रहते हुए हमें सामाजिक बुराइयोंको दूर करके, सत्य, अहिंसा और परोपकार-जैसे उच्च नैतिक आदर्शोंका पालन करना चाहिये। उनके उपदेशोंसे समाजके असहाय तथा निर्धन लोगोंमें आत्म-विश्वास, साहस, व्यक्तित्वकी पहचान और अन्यायसे जूझनेकी शक्तिका संचार हुआ।

गुरु घासीदासजीने पूरे छत्तीसगढ़ अंचलका दौराकर सतनामका प्रचार-प्रसार किया। उन्होंने सदैव गरीब, शोषित एवं पीड़ित लोगोंका साथ दिया और उनका उत्थान किया। घासीदासजीने प्रतीक चिह्न जैतखामसहित श्वेत धर्मध्वजाकी स्थापनाको अनिवार्य बताया।

रायपुर गजेटियरके अनुसार सन् १८२० से १८३० ई०के बीच तत्कालीन छत्तीसगढ़ अंचलकी लगभग १२

गयी थी। इसकी भव्यताको देखकर, जिसमें गुरु घासीदासजीने पवित्र सतनामका बृहद् स्तरपर प्रचार-प्रसार किया था, उसे सरकारी पत्रोंने '**सतनाम आन्दोलन**' लिखा।

गुरु घासीदासजीने लोगोंको समानता, स्वतन्त्रता और स्वाभिमानका सन्देश दिया। वे मानव-मानवके भेदको पूर्णत: समाप्त कर देना चाहते थे। वे लोगोंको चोरी, जुआ, हिंसा, व्यभिचार, नशाखोरी तथा मांसाहारका त्याग करने एवं नारी जातिके प्रति सम्मानका भाव रखनेका सन्देश देते थे। वे '**सादा जीवन उच्च विचार**' एवं '**अतिथिदेवो भव**' में विश्वास रखते थे। गुरु घासीदासजीके उपदेशोंने छत्तीसगढ़ अंचलके सभी वर्गके लोगोंको प्रभावित किया। उनके उपदेश किसी जाति, पन्थ या धर्मविशेषके लिये ही नहीं, वरन् समस्त मानव-जातिके लिये थे।

सन्त गुरु घासीदासजी पशु-पक्षियोंसे भी असीम स्नेह रखते थे। वे उनपर किसी भी प्रकारकी क्रूरता और मांसाहारके सख्त विरोधी थे। उन्होंने लोगोंको समझाया कि खेतोंकी हलसे जुताई करनेमें गायोंका इस्तेमाल न किया जाय। गुरु घासीदासजीके सन्देशों और उनकी जीवनीका प्रसार पन्थी-गीत और नृत्योंके जरिये भी व्यापक रूपसे हुआ है। पन्थी गीत और नृत्य छत्तीसगढ़ अंचलकी प्रख्यात लोकविधा मानी जाती है।

सन्त गुरु घासीदासजी ऐसे पहले सन्त थे, जिन्होंने छत्तीसगढ़ी भाषामें अपने लाखों अनुयायियोंको सत्यका सन्देश दिया। आजकल गिरौदपुरीमें सन्त गुरु घासीदासजीका निवास-स्थान '**गुरु निवास**' कहलाता है। यहाँ उनके सतनाम-पन्थकी गुरुगद्दी स्थापित की गयी है, जहाँ प्रत्येक वर्ष दिसम्बर माहमें उनके जन्म-दिवस (१८ दिसम्बर)-के अवसरपर अनुयायियोंका विशाल मेला लगता है।

गुरु घासीदासकी जन्मभूमि गिरौदपुरीमें कुतुबमीनारसे भी लगभग पाँच मीटर ऊँचे जैतखामका निर्माण किया गया है। जैतखाम सत्य और सात्त्विक आचरणका प्रतीक माना जाता है। इस जैतखामकी ऊँचाई सतहत्तर मीटर है। छत्तीसगढ़-शासनद्वारा इसके निर्माणपर लगभग बावन करोड़ रुपये खर्च किये गये हैं। इसे देखनेके लिये बारहों महीने देश-विदेशसे हजारोंकी संख्यामें श्रद्धालु और पर्यटक आते हैं। वायुदाब एवं भूकम्परोधी इस जैतखामकी बुनियाद साठ मीटर व्यासकी है और इसके आधार तलपर दो हजार श्रद्धालुओंके बैठनेकी व्यवस्थाके साथ एक विशाल सभागृहका भी निर्माण किया गया है।

गुरु घासीदासजीका व्यक्तित्व एक ऐसे प्रकाश-स्तम्भके समान है, जिसमें सत्य, अहिंसा, करुणा तथा जीवनका ध्येय उदात्त रूपसे प्रकट होता है। उनका जीवन-दर्शन युगोंतक मानवताका सन्देश देता रहेगा।

यही कारण है कि उनकी स्मृतिको चिरस्थायी बनानेके लिये तत्कालीन मध्यप्रदेश सरकारने सन् १९८३ ई० में बिलासपुरमें गुरु घासीदास विश्वविद्यालयकी स्थापना की थी। सन् २००९ ई० में इस विश्वविद्यालयको केन्द्रीय विश्वविद्यालयका दर्जा दे दिया गया है। वर्तमानमें यह छत्तीसगढ़ राज्यका एकमात्र केन्द्रीय विश्वविद्यालय है।

सन् २००० ई० में नवीन राज्य बननेके बाद छत्तीसगढ़-शासनने सन्त गुरु घासीदासजीकी स्मृतिमें सामाजिक चेतना और सामाजिक न्यायके क्षेत्रमें राज्य-स्तरीय गुरु घासीदास सम्मान स्थापित किया है।

भगवन्नाम-चिन्तन

इस युगमें नाम-जप ही प्रधान साधन है—मन न लगे तो नाम-भगवान्से प्रार्थना करनी चाहिये—'हे नाम-भगवन्! तुम दया करो, तुम्हीं साक्षात् मेरे प्रभु हो; अपने दिव्य प्रकाशसे मेरे अन्त:करणके अन्धकारका नाश कर दो। मेरे मनके सारे मलको जला दो। तुम सदा मेरी जिह्वापर नाचते रहो और नित्य-निरन्तर मेरे मनमें विहार करते रहो। तुम्हारे जीभपर आते ही मैं प्रेम-सागरमें डूब जाऊँ; सारे जगत्को, जगत्के सारे सम्बन्धोंको, तन-मन, लोक-परलोकको, स्वर्ग-मोक्षको भूलकर केवल प्रभुके—तुम्हारे प्रेममें ही निमग्न हो रहूँ। लाखों जिह्वाओंसे तुम्हारा उच्चारण करूँ, लाखों-करोड़ों कानोंसे मधुर नाम-ध्वनिको सुनूँ और करोड़ों-अरबों मनोंसे दिव्य नामानन्दका पान करूँ। जाग होऊँ ही नहीं। पीता ही रहूँ नाम-प्रभुको और उसीमें समाया रहूँ।'

गो-चिन्तन—

गोसंरक्षण—श्रीकृष्णावतारका मुख्य उद्देश्य

(श्रीजयदीपसिंहजी)

ध्येयो हरिः स कपिलागणमध्यसंस्थ-
स्ता आह्वयन् दधददक्षिणदोः स्थवेणुम्।
पाशं सयष्टिमपरत्र पयोदनीलः
पीताम्बरोऽहिरिपुपिच्छकृतावतंसः ॥

(नारदपुराण पूर्व० ८१।६०)

अर्थात् 'जो कपिला गायोंके बीचमें खड़े हो उनको पुकारते हैं, बायें हाथमें मुरली और दायें हाथमें रस्सी और लाठी लिये हुए हैं, जिनकी अंगकान्ति मेघके समान श्याम है, जो पीत वस्त्र और मोरपंखका मुकुट धारण करते हैं, उन श्यामसुन्दर श्रीहरिका ध्यान करना चाहिये।'

गोलोकाधिपति भगवान् श्रीकृष्ण जब गोलोकसे धराधामपर अवतीर्ण होते हैं, तो उनके साथ ही दिव्य वृन्दावन, गिरिराज गोवर्धन, निज-निकुंज, श्रीराधाजी एवं गोप-गोपियोंके साथ गौओंका भी अवतरण होता है; क्योंकि परब्रह्म परमात्मा श्रीकृष्णको इनके बिना पृथ्वीपर अच्छा ही नहीं लगता, अतः इनके लीला-उपकरणोंके रूपमें ये भी अवतरित होते हैं।

गोलोकधाममें गोवर्धन नामका गिरिराज सुशोभित है, जो गोपियों और गायोंके समूहसे घिरा रहता है, वहाँ श्याम वर्णवाली उत्तम यमुना नदी स्वच्छन्द गतिसे बहती रहती हैं, वहाँ दिव्य वृक्षों और लताओंसे भरा हुआ वृन्दावन अत्यन्त शोभा पाता है। वृन्दावनके मध्य भागमें बत्तीस वनोंसे युक्त एक 'निज निकुंज' है, जो पद्मरागादि सात प्रकारकी मणियोंसे निर्मित है। इसके प्रत्येक द्वारपर कोटि-कोटि मनोहर गौओंके दर्शन होते हैं। वे गौएँ दिव्य आभूषणोंसे विभूषित रहती हैं और श्वेत पर्वतके समान प्रतीत होती हैं। वे सब-की-सब दूध देनेवाली और नयी अवस्थाकी हैं। सभी सवत्सा हैं। उनके घण्टों तथा मंजीरोंसे मधुर ध्वनि होती रहती है। किंकिणीजालोंसे विभूषित उन गौओंके सींगोंमें सोना मढ़ा गया है। वे सुवर्णतुल्य हार एवं मालाएँ धारण करती हैं। उनके अंगोंसे प्रभा छिटकती रहती है। उनमेंसे कोई उजली, कोई काली, कोई पीली, कोई लाल, कोई हरी, कोई ताँबेके रंगकी और कोई चितकबरे रंगकी हैं। किन्हीं-किन्हींका वर्ण धुएँ-जैसा और किन्हींका कोयलके समान है। दूध देनेमें समुद्रकी तुलना करनेवाली उन गायोंके शरीरपर तरुणी गोपियोंद्वारा लगाये गये रंगीन छापे सुशोभित होते हैं। हिरणके समान छलाँग भरनेवाले बछड़ोंसे उनकी शोभा और बढ़ जाती है। गायोंके झुण्डमें विशाल शरीरवाले साँड़ भी इधर-उधर घूमा करते हैं। उनकी लम्बी गर्दन और बड़ी-बड़ी सींगें हैं। गौओंकी रक्षा करनेवाले वहाँ चरवाहे भी अनेक हैं। उनमेंसे कुछ तो हाथमें बेंतकी छड़ी लिये हुए हैं और दूसरोंके हाथोंमें सुन्दर बाँसुरी शोभा पाती है। उन सबके शरीरका रंग श्यामल है, वे भगवान् श्रीकृष्णचन्द्रकी लीलाएँ मधुर स्वरमें गाते रहते हैं। गोलोकाधिपति भगवान् श्रीकृष्णचन्द्र जब पृथ्वीपर अवतार लेते हैं, तो यह दिव्य वृन्दावन धरतीपर अवतरित हो जाता है।

भगवान् पूर्णकाम हैं, उन्हें कोई कामना नहीं होती, कोई अभिलाषा नहीं होती, वे तो मनुष्योंको शिक्षा देनेके लिये ही अवतार लेते हैं। श्रीमद्भागवतमें हनुमान्‌जी भगवान् श्रीरामकी वन्दना करते हुए कहते हैं—

मर्त्यावतारस्त्विह मर्त्यशिक्षणं
रक्षोवधायैव न केवलं विभोः।

अर्थात् हे प्रभो! आपका मनुष्यावतार केवल राक्षसोंके वधके लिये ही नहीं है, इसका मुख्य उद्देश्य तो मनुष्योंको शिक्षा देना है। इस आधारपर हम श्रीकृष्णावतारको देखते हैं तो भगवान्‌का यह अवतार गोसेवा, गोपालन, गोचारण और गोरक्षणके लिये ही मुख्य रूपसे प्रतीत होता है। उनके द्वारा की गयी व्रज-वृन्दावनकी उनकी विभिन्न लीलाओं यथा—वत्सासुर-वध, धेनुकासुर-वध, दावानल-पान, कालिय-दमन, गोवर्धन-धारण और अरिष्टासुर-वध आदिमें किसी-न-किसी रूपमें उनके अवतारके ये उद्देश्य सन्निहित हैं।

सुभाषित-त्रिवेणी

गीतामें अवतारवाद
[Anthropomorphism in Geeta]

अर्जुन उवाच

अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः।
कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति॥

अर्जुन बोले—आपका जन्म तो अर्वाचीन—अभी हालका है और सूर्यका जन्म बहुत पुराना है अर्थात् कल्पके आदिमें हो चुका था; तब मैं इस बातको कैसे समझूँ कि आपहीने कल्पके आदिमें सूर्यसे यह योग कहा था?

Arjuna said: You are of recent origin, while the birth of Vivasvān dates back to remote antiquity. How, then, am I to believe that You imparted this Yoga at the beginning of the creation!

श्रीभगवानुवाच

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥

श्रीभगवान् बोले—हे परंतप अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत-से जन्म हो चुके हैं। उन सबको तू नहीं जानता, किन्तु मैं जानता हूँ।

Śrī Bhagavān said : Arjuna, you and I have passed through many births, I remember them all; you do not remember, O chastiser of foes.

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥

मैं अजन्मा और अविनाशीस्वरूप होते हुए भी तथा समस्त प्राणियोंका ईश्वर होते हुए भी अपनी प्रकृतिको अधीन करके अपनी योगमायासे प्रकट होता हूँ।

Though birthless and immortal and the Lord of all beings, I manifest Myself through My own Yogamāyā (divine potency), keeping My nature (Prakṛti) under control.

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥

हे भारत! जब-जब धर्मकी हानि और अधर्मकी वृद्धि होती है, तब-तब ही मैं अपने रूपको रचता हूँ अर्थात् साकाररूपसे लोगोंके सम्मुख प्रकट होता हूँ।

Arjuna, whenever righteousness is on the decline, unrighteousness is in the ascendant, then I body Myself forth.

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥

साधु पुरुषोंका उद्धार करनेके लिये, पापकर्म करनेवालोंका विनाश करनेके लिये और धर्मकी अच्छी तरहसे स्थापना करनेके लिये मैं युग-युगमें प्रकट हुआ करता हूँ।

For the protection of the virtuous, for the extirpation of evil-doers, and for establishing Dharma (righteousness) on a firm footing. I manifest Myself from age to age.

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥

हे अर्जुन! मेरे जन्म और कर्म दिव्य अर्थात् निर्मल और अलौकिक हैं—इस प्रकार जो मनुष्य तत्त्वसे जान लेता है, वह शरीरको त्यागकर फिर जन्मको प्राप्त नहीं होता, किन्तु मुझे ही प्राप्त होता है।

Arjuna, My birth and activities are divine. He who knows this in reality is not reborn on leaving his body, but comes to Me.

[श्रीमद्भगवद्गीता ७। ४—९]

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७९, शक १९४४, सन् २०२३, सूर्य दक्षिणायन-उत्तरायण, हेमन्त-शिशिर-ऋतु, माघ-कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिशेष ५।१९ बजेतक	शनि	पुनर्वसु रात्रिमें २।१ बजेतक	७ जनवरी	**कर्कराशि** रात्रिमें ७।२३ बजेसे।
द्वितीया अहोरात्र	रवि	पुष्य ,, ४।३८ बजेतक	८ ,,	**मूल** रात्रिमें ४।३८ बजेसे।
द्वितीया प्रात: ७।२९ बजेतक	सोम	आश्लेषा अहोरात्र	९ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ८।३२ बजेसे।
तृतीया दिनमें ९।३४ बजेतक	मंगल	आश्लेषा प्रात: ७।१० बजेतक	१० ,,	**भद्रा** दिनमें ९।३४ बजेतक, **सिंहराशि** प्रात: ७।१० बजेसे, **संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय** रात्रिमें ८।२२ बजे।
चतुर्थी ,, ११।२३ बजेतक	बुध	मघा दिनमें ९।२८ बजेतक	११ ,,	**मूल** दिनमें ९।२८ बजेतक, **उ०षा०** का सूर्य रात्रिमें ८।४८ बजे।
पंचमी ,, १२।४९ बजेतक	गुरु	पू०फा० ,, ११।२४ बजेतक	१२ ,,	**कन्याराशि** सायं ५।४७ बजेसे।
षष्ठी दिनमें १।४८ बजेतक	शुक्र	उ०फा० दिनमें १२।५६ बजेतक	१३ ,,	**भद्रा** दिनमें १।४८ बजेसे रात्रिमें २।२ बजेतक।
सप्तमी ,, २।१६ बजेतक	शनि	हस्त ,, १।५७ बजेतक	१४ ,,	**तुलाराशि** रात्रिमें २।१२ बजेसे, **मकरसंक्रान्ति** रात्रिमे ३।२ बजे, खरमास समाप्त।
अष्टमी ,, २।११ बजेतक	रवि	चित्रा ,, २।२६ बजेतक	१५ ,,	**सूर्योदय** से **मकरसंक्रान्तिजन्य पुण्यकाल, उत्तरायण प्रारम्भ, शिशिरऋतु प्रारम्भ, खिचड़ी**।
नवमी ,, १।३७ बजेतक	सोम	स्वाती ,, २।२८ बजेतक	१६ ,,	**भद्रा** रात्रिमें १।६ बजेसे।
दशमी ,, १२।३६ बजेतक	मंगल	विशाखा ,, २।२ बजेतक	१७ ,,	**भद्रा** दिनमें १२।३६ बजेतक, **वृश्चिकराशि** दिनमें ८।८ बजेसे।
एकादशी ,, ११।१० बजेतक	बुध	अनुराधा दिनमें १।१४ बजेतक	१८ ,,	**षट्तिला एकादशीव्रत** (सबका)।
द्वादशी ,, ९।२४ बजेतक	गुरु	ज्येष्ठा ,, १२।७ बजेतक	१९ ,,	**धनुराशि, प्रदोषव्रत, तिलद्वादशी**।
त्रयोदशी प्रात: ७।२१ बजेतक	शुक्र	मूल ,, १०।४३ बजेतक	२० ,,	**भद्रा** प्रात: ७।२१ बजेसे रात्रिमें ६।१५ बजेतक, **सायन कुम्भका सूर्य** रात्रिमें ८।३५ बजे।
अमावस्या रात्रि २।४९ बजेतक	शनि	पू०षा० ,, ९।९ बजेतक	२१ ,,	**मौनी अमावस्या, मकरराशि** दिनमें २।४४ बजे।

सं० २०७९, शक १९४४, सन् २०२३, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, माघ-शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें १२।२६ बजेतक	रवि	उ०षा० प्रात: ७।२९ बजेतक	२२ जनवरी	× × × × ×
द्वितीया ,, १०।८ बजेतक	सोम	धनिष्ठा रात्रिमें ४।१३ बजेतक	२३ ,,	**कुम्भराशि** सायं ५।१ बजेसे, **पंचकारम्भ** सायं ५।१ बजे।
तृतीया ,, ७।५६ बजेतक	मंगल	शतभिषा ,, २।४६ बजेतक	२४ ,,	**श्रवणमें सूर्य** रात्रिमें ९।५७ बजे।
चतुर्थी ,, ५।५८ बजेतक	बुध	पू०भा० ,, १।३३ बजेतक	२५ ,,	**भद्रा** प्रात: ६।५७ बजेसे रात्रिमें ५।५८ बजेतक, **मीनराशि** रात्रिमें ७।५१ बजेसे, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत**।
पंचमी सायं ४।१७ बजेतक	गुरु	उ०भा० ,, १२।४० बजेतक	२६ ,,	**वसन्तपञ्चमी, गणतंत्रदिवस, मूल** रात्रिमें १२।४० बजेसे।
षष्ठी दिनमें २।५७ बजेतक	शुक्र	रेवती ,, १२।७ बजेतक	२७ ,,	**मेषराशि** रात्रिमें १२।७ बजेसे, **पंचक** समाप्त रात्रिमें १२।७ बजे।
सप्तमी ,, २।१ बजेतक	शनि	अश्विनी ,, ११।५९ बजेतक	२८ ,,	**भद्रा** दिनमें २।१ बजेसे रात्रिमें १।४८ बजेतक, **अचलासप्तमी, रथसप्तमी, मूल** राशिमें ११।५९ बजेतक।
अष्टमी ,, १।३५ बजेतक	रवि	भरणी ,, १२।२२ बजेतक	२९ ,,	**वृषराशि** रात्रिमें ६।३५ बजेसे।
नवमी ,, १।३८ बजेतक	सोम	कृत्तिका ,, १।१३ बजेतक	३० ,,	**महानन्दानवमी**।
दशमी ,, २।१४ बजेतक	मंगल	रोहिणी ,, २।३६ बजेतक	३१ ,,	**भद्रा** रात्रिमें २।३६ बजेतक।
एकादशी ,, ३।१८ बजेतक	बुध	मृगशिरा ,, ४।२६ बजेतक	१ फरवरी	**भद्रा** दिनमें ३।१८ बजेतक, **मिथुनराशि** दिनमें ३।३१ बजेसे, **जया एकादशीव्रत** (सबका)।
द्वादशी सायं ४।५१ बजेतक	गुरु	आर्द्रा अहोरात्र	२ ,,	**आमलकी द्वादशी**।
त्रयोदशी रात्रिमें ६।४४ बजेतक	शुक्र	आर्द्रा प्रात: ६।३७ बजेतक	३ ,,	**कर्कराशि** रात्रिमें २।३० बजेसे, **प्रदोषव्रत**।
चतुर्दशी ,, ८।४९ बजेतक	शनि	पुनर्वसु दिनमें ९।६ बजेतक	४ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ८।४९ बजेसे।

व्रतोत्सव-पर्व

सं० २०७९, शक १९४४, सन् २०२३, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन-कृष्णपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा रात्रिमें १।२ बजेतक	सोम	आश्लेषा दिनमें २।१८ बजेतक	६ फरवरी	**सिंहराशि** दिनमें २।१८ बजेसे, **धनिष्ठाका सूर्य** रात्रिमें १२।९ बजे।
द्वितीया ,, २।४८ बजेतक	मंगल	मघा सायं ४।३९ बजेतक	७ ,,	**मूल** सायं ४।३९ बजेतक।
तृतीया ,, ४।११ बजेतक	बुध	पू०फा० रात्रिमें ६।४२ बजेतक	८ ,,	**भद्रा** दिनमें ३।३० बजेसे रात्रिशेष ४।११ बजेतक, **कन्याराशि** रात्रिमें १।६ बजेसे।
चतुर्थी रात्रिशेष ५।६ बजेतक	गुरु	उ०फा० ,, ८।१८ बजेतक	९ ,,	**संकष्टी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, चन्द्रोदय** रात्रिमें ८।५५ बजे।
पंचमी ,, ५।३० बजेतक	शुक्र	हस्त ,, ९।२६ बजेतक	१० ,,	× × × × ×
षष्ठी ,, ५।२२ बजेतक	शनि	चित्रा ,, १०।४ बजेतक	११ ,,	**भद्रा** रात्रिशेष ५।२२ बजेसे, **तुलाराशि** दिनमें ९।४५ बजेसे।
सप्तमी ,, ४।४४ बजेतक	रवि	स्वाती ,, १०।१२ बजेतक	१२ ,,	**भद्रा** सायं ५।३ बजेतक।
अष्टमी रात्रिमें ३।३९ बजेतक	सोम	विशाखा ,, ९।५२ बजेतक	१३ ,,	**वृश्चिकराशि** दिनमें ३।५६ बजेसे, **श्रीजानकी-जयन्ती, कुम्भ संक्रान्ति** दिनमें १।४६ बजे।
नवमी ,, २।१२ बजेतक	मंगल	अनुराधा ,, ९।९ बजेतक	१४ ,,	**मूल** रात्रिमें ९।९ बजेसे।
दशमी ,, १२।२४ बजेतक	बुध	ज्येष्ठा ,, ८।५ बजेतक	१५ ,,	**भद्रा** दिनमें १।१८ बजेसे रात्रिमें १२।२४ बजेतक, **धनुराशि** रात्रिमें ८।५ बजेसे।
एकादशी ,, १०।२० बजेतक	गुरु	मूल ,, ६।४५ बजेतक	१६ ,,	**विजया एकादशीव्रत (सबका), मूल** रात्रिमें ६।४५ बजेतक।
द्वादशी ,, ८।४ बजेतक	शुक्र	पू०षा० सायं ५।१२ बजेतक	१७ ,,	**मकरराशि** रात्रिमें १०।४८ बजे।
त्रयोदशी सायं ५।४४ बजेतक	शनि	उ०षा० दिनमें ३।३५ बजेतक	१८ ,,	**भद्रा** सायं ५।४४ बजेसे रात्रिशेष ४।३२ बजेतक, **शनिप्रदोषव्रत, महाशिवरात्रिव्रत।**
चतुर्दशी दिनमें ३।२० बजेतक	रवि	श्रवण ,, १।५३ बजेतक	१९ ,,	**कुम्भराशि** रात्रिमें १।५ बजेसे, **पंचकारम्भ** रात्रिमें १।५ बजे, **शतभिषाका सूर्य** रात्रिमें ३।४८ बजे, **सायन मीनका सूर्य** दिनमें ८।२७ बजे।
अमावस्या ,, १।१ बजेतक	सोम	धनिष्ठा ,, १२।१६ बजेतक	२० ,,	**सोमवती अमावस्या।**

सं० २०७९, शक १९४४, सन् २०२३, सूर्य उत्तरायण, शिशिर-ऋतु, फाल्गुन-शुक्लपक्ष

तिथि	वार	नक्षत्र	दिनांक	मूल, भद्रा, पंचक तथा व्रत-पर्वादि
प्रतिपदा दिनमें १०।४८ बजेतक	मंगल	शतभिषा दिनमें १०।४६ बजेतक	२१ फरवरी	**मीनराशि** रात्रिमें ३।४९ बजेसे।
द्वितीया ,, ८।५० बजेतक	बुध	पू०भा० ,, ९।२९ बजेतक	२२ ,,	× × × × ×
तृतीया प्रात: ७।९ बजेतक	गुरु	उ०भा० ,, ८।३२ बजेतक	२३ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ६।२९ बजेसे रात्रिशेष ५।५० बजेतक, **वैनायकी श्रीगणेशचतुर्थीव्रत, मूल** प्रात: ८।३२ बजेसे।
पंचमी रात्रिशेष ४।५६ बजेतक	शुक्र	रेवती प्रात: ७।५४ बजेतक	२४ ,,	**मेषराशि** प्रात: ७।५४ बजेसे, **पंचक समाप्त** प्रात: ७।५४ बजे।
षष्ठी ,, ४।३१ बजेतक	शनि	अश्विनी ,, ७।४१ बजेतक	२५ ,,	**मूल** प्रात: ७।४१ बजेतक।
सप्तमी ,, ४।३६ बजेतक	रवि	भरणी ,, ७।५६ बजेतक	२६ ,,	**भद्रा** रात्रिशेष ४।३६ बजेसे, **वृषराशि** दिनमें २।७ बजेसे।
अष्टमी ,, ५।१३ बजेतक	सोम	कृत्तिका दिनमें ८।४३ बजेतक	२७ ,,	**भद्रा** सायं ४।५४ बजेतक, **होलाष्टक प्रारम्भ।**
नवमी अहोरात्र	मंगल	रोहिणी ,, ९।५९ बजेतक	२८ ,,	**मिथुनराशि** रात्रिमें १०।५१ बजेसे।
नवमी प्रात: ६।१७ बजेतक	बुध	मृगशिरा ,, ११।४२ बजेतक	१ मार्च	× × × × ×
दशमी ,, ७।५० बजेतक	गुरु	आर्द्रा ,, १।५० बजेतक	२ ,,	**भद्रा** रात्रिमें ८।४७ बजेसे।
एकादशी दिनमें९।४४ बजेतक	शुक्र	पुनर्वसु सायं ४।१७ बजेतक	३ ,,	**भद्रा** दिनमें ९।४४ बजेतक, **कर्कराशि** दिनमें ९।४० बजेसे, **आमलकी एकादशीव्रत (सबका)।**
द्वादशी ,, ११।४९ बजेतक	शनि	पुष्य रात्रिमें ६।५३ बजेतक	४ ,,	**शनिप्रदोषव्रत, मूल** रात्रिमें ६।५३ बजेसे।
त्रयोदशी ,, १।५७ बजेतक	रवि	आश्लेषा ,, ९।२८ बजेतक	५ ,,	**सिंहराशि** रात्रिमें ९।२८ बजेसे, **पू०भा०में सूर्य** दिनमें ९।१९ बजे।
चतुर्दशी ,, ३।५६ बजेतक	सोम	मघा ,, ११।५३ बजेतक	६ ,,	**भद्रा** दिनमें ३।५६ बजेसे रात्रिशेष ४।४८ बजेतक, **व्रतपूर्णिमा, भद्रा बाद होलिका दहन।**

गीतापाठके अद्‌भुत चमत्कार

(श्रीसुरेशचन्द्रजी मिश्र, शास्त्री, ज्योतिषाचार्य)

हमारे पितामह स्व० श्रीजयनारायणजी मिश्र तीसरी कक्षा उत्तीर्ण थे। अपना नाम भी प्राय: अशुद्ध ही लिख देते थे, अत: कहीं हस्ताक्षरकी आवश्यकता होती, तो अपना अँगूठा लगाकर ही काम चलाते थे।

किसी व्यक्तिने उन्हें गीताके अठारह अध्याय मौखिक रटा दिये। वे नित्य पूरी गीताके श्लोक बोल-बोलकर अभ्यास करते रहते थे। इनका दैनिक स्वाध्याय था पूरे श्लोकको मौखिक बोलकर ही कुछ भी खाना-पीना। पण्डिताईका धन्धा पुश्तैनी था, अतएव हर प्रकारके पूजा-पाठ अनुष्ठानमें मन्त्रोंके स्थानपर गीताके श्लोक ही बोलते थे। कई बार विद्वान् पण्डित इनको टोक भी देते थे। इनका एक ही उत्तर रहता—'स्वयं भगवान्‌के मुखसे उच्चरित श्लोकोंसे बढ़कर न कोई शास्त्र है न कोई ग्रन्थ।'

(१) एक बार वे अपने गाँवसे ४-५ कि०मी० दूरके गाँवमें एक लड़कीका विवाह करानेके बाद रात्रिमें घर लौट रहे थे। उस समय रात्रिके लगभग दो बज रहे थे। पितामहके पास चढ़ावा और खाद्य-सामग्री भी थी। उस समय पैदल चलनेके अलावा अन्य कोई साधन न थे। वृद्ध शरीर तो था ही, वे लाठी टेकते-टेकते अकेले आ रहे थे। रात्रिमें जनशून्य जंगलका रास्ता था। तभी अचानक बच्चोंके रोनेकी आवाज और पत्थर गिरनेकी वारदात होने लगी। इन्होंने अपने विवेकसे वहीं रास्तेपर जूतियाँ खोलकर आसन जमा लिया और श्रीकृष्णका ध्यान करते हुए गीताका सस्वर मौखिक पाठ करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ ही समयमें सब उपद्रव शान्त हो गये और सामने एक व्यक्तिने आकर कहा—'बाबा! कहाँ जाना है?' उन्होंने उत्तर दिया—'अपने गाँव।' आगन्तुकने बताया तुम्हारे ग्रामका रास्ता दूसरा है। उठो! मैं सही रास्तेपर छोड़ देता हूँ। वे उठकर उसके साथ उससे वे पूछने लगे—'भाई! तुम कौन हो? और कहाँ जाओगे?' वह बोला, 'मेरा नाम किशन है, मैं नहीं जानता कहाँसे आया हूँ और कहाँ जाना है।' कहकर अन्तर्धान हो गया। पितामह हतप्रभ होकर सोचने लगे कि अरे! मैं न चरण छू सका और न दुलार सका अपने इष्टदेवको।

(२) सन् १९५८ में उन्हें परलोक सिधारनेका आभास होने लगा। लगभग एक माह पूर्व ही वे जानेकी घोषणा करने लगे और परिवारके सब सदस्यों छोटे-बड़े सभीसे क्षमायाचनापूर्वक सहानुभूतिके शब्द बोलने लगे। आखिर आश्विन कृष्णा एकादशीको रात्रि ९-१० बजे सब परिवारवालोंको एकत्र किया तथा पास बिठाकर कहने लगे—'बच्चो! आज तुम्हारी दादीका श्राद्ध था। मैं आज नहीं जा सका; क्योंकि मुझे दाम्पत्य सुख आगे नहीं चाहिये। कल मेरे पिताजीका श्राद्ध है। पुत्र पिताकी प्रतिलिपि होता है अतएव कल उनके साथ मिलाप करना है। मेरे जानेपर तुम्हें रोना नहीं है। **'जय श्रीकृष्ण, जय श्रीकृष्ण'** ही बोलना है।' पितामहने हमारी माताजीसे कहा—'बेटी अंगूरी! परिवारका मुखिया होनेके नाते क्रोधवश कई बार तुम्हें भला-बुरा कहा है, भुल देना। कल मुझे प्रात: ९ बजे जाना है। प्रात: ८ बजे ही पिताजीका श्राद्ध निकालकर गायको खिलाना और कमरेमें मिट्टी, गोबरसे लीपकर कुशा बिछा देना। हमारी माँ इनकार करने लगी। मृत्युसे पूर्व इस प्रकार करना सगुनके विपरीत है। हम बच्चे थे, उनकी मरनेकी बात सुनकर हँस रहे थे। कैसी पागलपनकी बात है, जैसे सब कुछ इनके हाथमें ही हो। रात्रिको इस चर्चाके बाद हम सब सो गये।

दूसरे दिन पितामह सुबह ८.३० बजे स्नान करते

शालग्रामका सिंहासन, तुलसीपत्र, पंचपात्रमें चरणामृत एवं गीताकी अर्थवाली पुस्तक तथा दो आसन बैठनेके लिये यहाँ लेकर आओ। आजतक जैसे-तैसे टूटे-फूटे श्लोकोंको मैं तोतेकी तरह रटता बोलता रहा। आज अब मुझे केवल गीताके अर्थका श्रवण करना है, भगवान्‌ने क्या-क्या बताया है, मालूम करूँगा।'

दोनोंके आसन आमने-सामने थे। पिताजी एक-एक श्लोकका अर्थ सहजतासे समझाते जा रहे थे। घीका दीपक एवं अगरबत्ती जल रही थी।

पिताजीने गीताके आठवें अध्यायके १३वें श्लोकका पाठकर उसका अर्थ किया—

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥

अर्थात् 'ॐ इस एक अक्षररूप ब्रह्मका उच्चारण करता हुआ और मेरे निर्गुण स्वरूपका चिन्तन करता हुआ, जो व्यक्ति शरीर त्यागता है, वह परम गतिको प्राप्त होता है।' पितामह गीता बन्द करनेका संकेत करते हुए बोले—'गीताका यही सार है, आगे तो माहात्म्यमात्र है, पहले मैं '**ॐ नमो भगवते वासुदेवाय**' बोलूँगा फिर तुम उसे दोहराते हुए मेरे मुखमें चरणामृत डालना। दो बार पितामह बोले और पिताजीने उसे दोहराते हुए चरणामृत डाला, तीसरी बार वे मन्त्र तो बोले, किंतु चरणामृत डालते-डालते उन्होंने देह त्याग दिया। हमारे पिताजी अवाक् थे, माँ गोबरसे लीपकर कुशा बिछा रही थी और हम सारी बातसे अनजान होकर हँस रहे थे।

इस प्रकार मेरे पितामहने '**एकं शास्त्रं देवकीपुत्रगीतम्**' इस बातपर उत्कट विश्वास रखते हुए श्रीमद्भगवद्गीताके अनुग्रहसे लोक-परलोक सुधार लिया।

बोध-कथा—

असहायके आश्रय

यूनानके बादहशाह रोगी हो गये थे। हकीमोंकी चिकित्सा कोई लाभ नहीं कर रही थी। अन्तमें हकीमोंने मिलकर सलाह की। उन्होंने कुछ लक्षण बताये और कहा—'जिस मनुष्यमें ये लक्षण हों, उसका पित्ताशय मिले बिना बादशाहके रोगको दूर करनेवाली दवा नहीं बन सकती।'

राजसेवक इधर-उधर दौड़े और एक बालकको वे पकड़ ही लाये। बालक एक निर्धन परिवारका था। उसके और भी भाई थे। उसके माता-पिताने पर्याप्त धन लेकर अपने पुत्रको वधके लिये दे दिया था। बादशाहने काजीसे पुछवाया कि क्या करना चाहिये, तो उसने फतवा दे दिया—'मुल्कके शाहंशाहकी जान बचानेके लिये रिआयामें किन्हीं एक-दोकी जान लेनी हो तो वह गुनाह नहीं है।'

हकीमोंकी व्यवस्थाके अनुसार लड़केको बादशाहके सामने खड़ा किया गया। हकीम अपनी तैयारी करके बैठ गये। अब जल्लादने तलवार उठायी। इसी समय लड़केने आकाशकी ओर देखा और हँस पड़ा। बादशाहने संकेतसे जल्लादको रोककर पूछा—'लड़के! तू हँसा क्यों?'

लड़का बोला—'माँ-बाप जिस सन्तानकी रक्षाके लिये प्राण देते थे, उसी सन्तानको उन्होंने मारनेके लिये बेच दिया। काजी जो न्यायमूर्ति कहा जाता है, उसने एक निरपराधकी हत्याका फतवा दे दिया। बादशाह, जो मुल्कका रक्षक है, अपनी निर्दोष प्रजाके एक बालककी हत्या करवा रहा है। ऐसी दशामें असहाय मनुष्य किसका आश्रय ले? मैं इस असहाय अवस्थामें पहुँच गया हूँ। अब मैं दीन-दुनियाके मालिककी ओर देखकर हँसा कि परमात्मा! संसारकी लीला तो देख ली, अब तेरी लीला देखनी है। जल्लादकी उठी तलवारका तू क्या करेगा?'

'मुझे माफ कर, बेटा! वह तलवार अब फिर नहीं उठेगी।' बादशाहने बालकसे क्षमा माँगी।

कृपानुभूति

श्रीदत्तकृपासे कुष्ठ एवं रक्तविकारका नाश

नर्मदातटविहारी ब्रह्मलीन श्रीरंग अवधूतके परम शिष्य श्रीश्रीरामदासजी अवधूत हमारे टटेरा ग्राममें स्थित हनुमान्-मन्दिरमें संवत् २००५ से निवास कर रहे थे। ये अवधूतजी दत्तात्रेयजीके परम उपासक थे। **ओहम् सोहम् द्रां दासोऽहम्** मन्त्रका अनवरत जप करनेमें संलग्न रहते थे। दैनिक स्वाध्यायमें वे गुरुलीलामृत, दत्तात्रेयवज्रकवच, रंगहृदयम्का पाठ करते थे।

हनुमान्जीकी सेवा-पूजाके साथ ही इनका दैनिक कार्य था किन्हीं तीन घरोंसे भिक्षा लाना। वे किसीके घरके आगे जाकर तीन बार '**रामलक्ष्मणजानकी जय बोलो हनुमान्की**' कहते। अगर तीसरी आवाज सुनकर भी कोई व्यक्ति बाहर नहीं आता, तो वे दूसरे घरको चले जाते। वे बार-बार आग्रह करनेपर भी दुबारा जाकर भिक्षा नहीं लेते थे। अतएव सभी लोग बाबाजीके आनेकी प्रतीक्षा करते रहते थे। वे भिक्षाके आटेको तीन हिस्सोंमें बाँटकर एक हिस्सा पीपेमें अतिथिके लिये, दूसरा हिस्सा गाय एवं चीटियोंके लिये तथा तीसरा हिस्सा भगवत्प्रसाद एवं स्वयंके भोजनके लिये काममें लेते थे।

कोई इनके चरण छूकर प्रणाम करता तो उसे थप्पड़ मारते और कहते—'**परस्परं देवो भव**' (तुम मुझे ज्ञान दोगे तो मैं भी दूँगा)' इसलिये ज्यादातर लोग इन्हें 'बावलिया बाबाजी' कहते थे।

वे कहते मैं कानमें फूँक मारकर गुरुमन्त्र देकर वित्तापहारी नहीं, नाकमें फूँक देकर चित्तापहारी हूँ **श्वासे श्वासे दत्तनाम स्मरात्मन्।** हर श्वासमें अपने इष्टका स्मरण एवं ध्यान करो।

एक बार उन्हें भयंकर रक्तविकार एवं कुष्ठ व्याधि हो गयी। पूरे शरीरमें दाद-खाज एवं बदबूदार पानी भी रिसने लगा। ग्रामवासियोंने डॉक्टर-वैद्योंसे भी मिलवाया, किंतु वे इस बातपर अडिग रहे 'मैं स्वयं स्वाध्यायके बलबूते इस रोगपर विजय प्राप्त करूँगा।' दवाके नामपर वे केवल गोमूत्रमें मिलाकर कपूर लगाते थे और स्वाध्यायमें रोगनाशक नारदपुराणोक्त दत्तस्तोत्र* एवं दत्तात्रेयवज्रकवच आदिका पाठ करते थे। लगभग तीन माहमें समूल व्याधि शान्त हो गयी।

—**नाथूलालजी सैन**

---

* जटाधरं पाण्डुरङ्गं शूलहस्तं कृपानिधिम्। सर्वरोगहरं देवं दत्तात्रेयमहं भजे॥
जगदुत्पत्तिकर्त्रे च स्थितिसंहारहेतवे। भवपाशविमुक्ताय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १ ॥
जराजन्मविनाशाय देहशुद्धिकराय च। दिगम्बर दयामूर्ते दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ २ ॥
कर्पूरकान्तिदेहाय ब्रह्ममूर्तिधराय च। वेदशास्त्रपरिज्ञाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ३ ॥
ह्रस्वदीर्घकृशस्थूलनामगोत्रविवर्जित । पंचभूतैकदीप्ताय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ४ ॥
यज्ञभोक्त्रे च यज्ञाय यज्ञरूपधराय च। यज्ञप्रियाय सिद्धाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ५ ॥
आदौ ब्रह्मा मध्ये विष्णुरन्ते देवः सदाशिवः। मूर्तित्रयस्वरूपाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ६ ॥
भोगालयाय भोगाय योग्ययोग्याय धारिणे। जितेन्द्रिय जितज्ञाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ७ ॥
दिगम्बराय दिव्याय दिव्यरूपधराय च। सदोदितपरब्रह्म दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ८ ॥
जम्बूद्वीपे महाक्षेत्रे मातापुरनिवासिने। जयमानः सतां देव दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ९ ॥
भिक्षाटनं गृहे ग्रामे पात्रं हेममयं करे। नानास्वादमयी भिक्षा दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १० ॥
ब्रह्मज्ञानमयी मुद्रा वस्त्रे चाकाशभूतले। प्रज्ञानघनबोधाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ ११ ॥
अवधूत सदानन्द परब्रह्मस्वरूपिणे। विदेहदेहरूपाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १२ ॥
सत्यरूप सदाचार सत्यधर्मपरायण। सत्याश्रय परोक्षाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १३ ॥
शूलहस्त गदापाणे वनमालासुकन्धर। यज्ञसूत्रधर ब्रह्मन् दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १४ ॥
क्षराक्षरस्वरूपाय परात्परतराय च। दत्तमुक्तिपरस्तोत्र दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १५ ॥
दत्तविद्याय लक्ष्मीश दत्तस्वात्मस्वरूपिणे। गुणनिर्गुणरूपाय दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १६ ॥
शत्रुनाशकरं स्तोत्रं ज्ञानविज्ञानदायकम्। सर्वपापशमं याति दत्तात्रेय नमोऽस्तु ते॥ १७ ॥

पढ़ो, समझो और करो

(१)

लाभांशका दान करना क्यों जरूरी

मैं अपने परिवारके साथ बिलासपुर, छत्तीसगढ़में रहता था। मेरे पिताजी उन दिनों भारतीय खाद्य निगममें कार्य करते थे। हमारे पड़ोसमें ही एक वैश्य परिवार हमारे रहनेसे पहले-से ही निवास करता था। जमीन-जायदादसे वे लोग काफी सम्पन्न थे। रुपये-पैसोंकी भी कोई कमी नहीं थी। उनके लड़केसे पड़ोसी होनेके नाते मेरी मित्रता थी। वैश्यका साहूकारीका काम था। जमीन-जायदाद और साहूकारी-कार्यसे वे दिन दूनी-रात चौगुनी तरक्की कर रहे थे। साहूकारीसे भारी ब्याजदर वसूलना उनका नित्य प्रतिदिनका कार्य था। लेकिन दान, दया, धर्म और पुण्यका कार्य उनके लिये सबसे बेकार कार्य था। इस प्रकारके कार्यके लिये वे एकदम शून्य थे। अगर कोई दान-पुण्यके लिये कहे या किसी मजबूर-लाचारकी सहायताकी बात करे, तो उनको बहुत बुरा लगता। इस विषयपर चर्चा करनेवालेको वे खूब खरी-खोटी सुनाते एवं धार्मिक लोगों—साधुओं एवं ब्राह्मणोंका हँसी-मजाक उड़ाते। लेकिन समय सभी इंसानका एक-जैसा नहीं रहता। समयका चक्र कुछ ऐसा चला कि साहूकार असमय ही काल-कवलित हो गया। पिताकी छत्रछाया सरसे उठते ही साहूकारद्वारा जिनको पैसा उधार दिया गया था, उन्होंने लौटाया नहीं। पिताकी तरह बेटेने भी कभी दान-पुण्य तथा पितरोंका श्राद्ध किया ही नहीं। गरीबों एवं मजलूमोंकी हाय कभी बेकार नहीं जाती; समयानुसार साहूकारके बेटेका विवाह हुआ। विवाहके छः या दस दिनोंके बाद साहूकारका बेटा बीमार पड़ गया। चिकित्सालयमें डॉक्टरी जाँच करनेपर पता चला कि कैन्सर-जैसा जानलेवा रोग है। फिर होना क्या था! नई ब्याहता पत्नी अपने पतिको छोड़कर तलाक किनारा कर लिया। इधर साहूकारके पिताद्वारा कमायी गयी सारी कमाई और अपना कमाया धन भी दवाइयो एवं डॉक्टरीपर खर्च होने लगा और अन्तमें प्राण भी नहीं बचा। अन्यायसे कमाया गया धन व्यर्थ ही चला गया।

इस घटनाका उल्लेख करनेका यही उद्देश्य है कि जो भाई-बहन इसे पढ़ें कि कहीं वे भी तो इस तरहके पापकी कमाई नहीं कर रहे हैं।

अगर आप साहूकारी ब्याजका कार्य करते हैं य किसी अन्य व्यवसायद्वारा भगवान्‌ने आपको माला-माल किया है, तो उसमेंका कुछ हिस्सा जरूरतमन्दों, गरीबो एवं असहाय रोगियोंको दान करके अपना तन-मन-धन पवित्र करें।—**नारायणजी हरि**

(२)

निःस्वार्थ सेवाका उदाहरण

मैं छत्तीसगढ़का रहनेवाला एक ब्राह्मण परिवारसे हूँ, पीताम्बरा पीठ, दतिया जो मध्यप्रदेशमें स्थित है, वहाँसे मैंने दीक्षा ली है। अतः पिछले कई वर्षोंसे मैं माघ महीनेके शुक्लपक्षमें पड़नेवाले गुप्त नवरात्रमें माँ पीताम्बर देवीके दर्शन-आराधन एवं जप-यज्ञमें जाया करता हूँ वैसे तो मैंने जीवनमें माँ भगवतीकी कृपासे कई अलौकिक चमत्कार देखे हैं, परंतु विगत कुछ वर्षों पूर्व २०१७ ई० में हुई एक घटनाको मैं पाठकोंको बताना चाहता हूँ।

जनवरीका महीना था, मैं प्रत्येक वर्षकी भाँति इस बार भी माँके दर्शनहेतु दतियामें पहुँचा। नौ दिन जप-पूजन इत्यादि करनेके पश्चात् मैं वापस छत्तीसगढ़ अपने घरके लिये दतिया रेलवे स्टेशन पहुँचा। उस समय शामका समय था और मैं ट्रेन आनेकी प्रतीक्षा करने लगा। चूँकि मेरी पाचन-शक्ति कमजोर है, इस कारण मैं जब कभी दूसरे स्थान जाता हूँ, तो पानी

हैं। उस दिन भी ऐसा ही हुआ। मुझे एकदमसे शौचका आभास हुआ और मैं बहुत घबरा गया कि अब मैं क्या करूँ ट्रेन आनेका समय हो गया था और शौचालय प्लेटफार्म नम्बर एकपर ही था। ऐसेमें इतना अधिक सामान जो कि प्लेटफार्म नम्बर दोतक ऑटोरिक्शावालेकी मददसे ले आ पाया था, उसे लेकर कैसे और कहाँ जाऊँ—इस असमंजसकी स्थितिमें कुछ समझ नहीं आ रहा था। तभी मेरे बगलमें एक अनजान व्यक्ति आकर बैठ गया। फिर हम दोनोंमें कुछ बातें होने लगीं। आदमी भला लग रहा था, मैंने उससे अपनी परेशानी बतायी। यह सुनकर उसने कहा कि 'देखिये, भाईसाहब! इस प्लेटफार्मपर तो कोई शौचालय नहीं है। आपको प्लेटफार्म नम्बर एकपर जाना पड़ेगा।' मैंने सोचा कि इस अजनबीपर कैसे विश्वास किया जाय और मैं पूरा सामान इसके भरोसे छोड़कर कैसे चला जाऊँ? फिर थोड़ा रुककर वे स्वयं ही बोले—'आइये, मैं आपको प्लेटफार्म एकतक लिये चलता हूँ।' इतना कहते हुए उन भले व्यक्तिने मेरा भारी सामान उठा लिया और मेरे साथ उस स्थानतक आये। फिर मैं शौचादिसे निवृत्त हो पुनः उनके साथ प्लेटफार्म नम्बर दो-तक आ गया। तभी ट्रेन भी आ गयी, उन्होंने मुझे ट्रेनमें भी बिठा दिया। फिर मैं सामान व्यवस्थितकर जब उनका शुक्रिया अदा करनेके लिये मुड़ा, तो वे वहाँ नहीं थे। मैंने उन्हें वहाँ खोजनेका प्रयास भी किया, परंतु वे नहीं दीखे। धन्य हैं ऐसे व्यक्ति, जिनके हृदयमें मुझ-जैसे अजनबीके प्रति इतनी करुणा थी। उनके द्वारा किया गया यह कार्य निःस्वार्थ सेवाका एक अनुपम उदाहरण है।—**अज्ञात स्रोतसे प्राप्त**

(३)

हनुमान-चालीसाके पाठका प्रभाव

यह घटना सन् १९८९ ई०की है, जब मैं राष्ट्रीय अपने चिकित्सा-परीक्षणहेतु दिल्लीके सैन्य अस्पतालमे आया था। मैं वायुसेनामें जाना चाहता था। इसमे परीक्षण बहुत कठिन होता है। पूरे शरीरका बहुत ही विस्तार और बारीकीसे परीक्षण किया जाता है। नारायणकी कृपासे मेरे सभी मुख्य-मुख्य परीक्षण, जिसमें हृदय, गुर्दा, फेफड़े, दिमागके परीक्षण भी शामिल थे, सभीके एक्स-रे, एम०आर०आई० और रक्तके परीक्षण सफल रहे। अन्तमें त्वचाका परीक्षण बचा था, जो कि बहुत ही मामूली समझा जाता है।

मैं डॉक्टरके कमरेमें पहुँचा, तो परीक्षण करते हुए उसने मेरी पीठपर एक वृत्ताकार चिह्न देखा और तुरन्त दूरभाषपर उसने किसीसे बात की। मैं सामने बैठ एकदम घबरा गया और मेरा दिल जोरसे धड़कने लगा। डॉक्टरने मुझे उसी वक्त एक उच्च विशेषज्ञके पास भेज दिया। जो परीक्षण इतने गम्भीर समझे जाते थे, वे सब मैं आसानीसे पास कर चुका था, किंतु यह छोटा-स परीक्षण मेरे वायुसेनामें चयनके रास्तेमें हिमालय बन बैठा।

मैं भारी मनसे उच्च विशेषज्ञके कमरेकी तरफ बढ़ा। रास्तेमें सच्चे और आर्त मनसे मैंने हनुमान-चालीसाका पाठ किया। मेरी आँखें नम थीं और भरे मनसे मैंने हनुमान्‌जीसे विनती की कि मैं इस परीक्षणमे सफल हो जाऊँ।

मैं सहमा हुआ विशेषज्ञके पास पहुँचा। डॉक्टरने मेरा चिह्न देखा और गुस्सेमें जोरसे बोला कि किस बेवकूफने तुम्हें मेरे पास भेजा है। उसे पता नहीं यह तो मात्र जन्म-चिह्न है, ये कोई त्वचा रोग थोड़े ही है इतना कहते ही उसने मुझे तुरन्त परीक्षणमें पास कर दिया।

एक क्षणके लिये मुझे ऐसा महसूस हुआ, जैसे भगवान्‌ने मेरी प्रार्थना सुन ली। मेरी खुशीका ठिकाना न रहा और खुशीके आँसू मेरी आँखोंसे झर-झर गिरने

एक कैण्टीन थी, उसमें चला गया। वहाँपर हनुमान्‌जीकी एक फोटो दीवारपर टँगी थी, मैं अपने मौन भावसे उन्हें शत-शत प्रणाम कर रहा था। मेरे आँसू अभी भी रुके नहीं थे। आज भी वह दिन, वह क्षण आँखोंके सामने बिलकुल उसी तरह दिखने लगता है। फिर कुछ दिनों बाद मैं राष्ट्रीय रक्षा अकादमीमें पॉयलट बन गया।

—विकास बाली

(४)

भगवत्कृपाकी महिमा

भगवत्-आराधनाका फल भगवत्कृपाके रूपमें अवश्य प्राप्त होता है, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

आर्तभावसे की गयी प्रार्थना भगवान् अवश्य सुनते हैं और भक्तोंके हितके लिये वे सदैव तत्पर रहते हैं।

पिछले वर्षकी बात है, अप्रैल २०२१ में जब पूरा विश्व कोरोना महामारीसे त्रस्त था और भारतमें भी कोरोनाकी दूसरी लहरने हाहाकार मचा रखा था, उसी समय हमारे परिवारके मुखिया, जिनकी आयु लगभग ७० वर्ष है, उनको कोरोना हो गया।

यह घटना पटना (बिहार)-की है। १७ अप्रैलको उन्हें एक अस्पतालमें भर्ती कराया गया। हमारा परिवार वहाँ ५० वर्षोंसे रहता है और वहाँ भी हमारे सामाजिक एवं राजनीतिक सम्पर्क अच्छे हैं, परंतु अस्पतालमें एडमिट करा पाना उस समय बहुत बड़ा कार्य साबित हो रहा था।

उनके स्वास्थ्यमें सुधार नहीं हो पा रहा था, इसलिये उन्हें दूसरे अस्पतालमें जहाँ वेण्टिलेटरकी सुविधा हो, वहाँ शिफ्ट करनेका निर्णय लिया गया, परंतु महामारीके इस कालमें किसी भी अस्पतालमें बेड नहीं मिल पा रही थी और हमारे सारे सम्पर्क धरे-के-धरे रह गये। हमें उस दिन अपनी हैसियतका आभास हुआ कि प्रभुकृपाके बिना सारे पुरुषार्थ निरर्थक हैं।

जब मनुष्यके सारे सहारे छूट जाते हैं और 'हारेको हरिनाम' की स्थिति आ जाती है, तभी प्रभुकी कृपा होती है। हमपर भी प्रभुकी कृपा हुई और एक अस्पतालमे उनको बेड प्राप्त हो गयी, परंतु वहाँ जब हमें एडमिट करा रहे थे, तभी चिकित्सकने कह दिया था कि इनके बचनेकी सम्भावना बहुत कम है। फिर भी किसी चमत्कारकी आशासे उनका कई दिनोंतक इलाज चलत रहा। उन्हें कई दिनोंतक वेण्टिलेटरपर रखा गया। स्थिति थोड़ी सामान्य होनेके पहले ही और विषम हो जाती

हम परिवारके सदस्योंके पास भगवान्‌से प्रार्थन करनेके अलावा कोई दूसरा उपाय नहीं था। २३ अप्रैलसे एक ग्रुप बनाकर परिवारके लगभग ३५ सदस्योंने सन्ध्य साढ़े पाँच बजेसे सात बजेतक प्रतिदिन डिजिटल माध्यमसे जूम ऐपपर हनुमान-चालीसा, हनुमान-बाहुक, भजन और लघु महामृत्युंजय मन्त्र इत्यादिका एक साथ पाठ करन आरम्भ किया। इस प्रकार हमारे द्वारा प्रतिदिन भगवत्-आराधना और प्रार्थनाका कार्य होता रहा। हनुमान-चालीसा, भजन, हनुमान-बाहुकका पाठ, सवा पाँच लाख लघु महामृत्युंजय-मन्त्रका जप भी किया गया। १७ मईको तो अस्पतालकी तरफसे जवाब दे दिया गया था कि इन्हें आप अपने घर ले जायँ और सेवा करें, सुधार सम्भव नहीं है, फिर भी हमने आग्रहपूर्वक उन्हें अस्पतालमें रखा

अन्तमें हमारी आराधनाका फल मिला और २८ मईको भैया घर आ गये, तब भी चिकित्सकका यही कहना था कि अब आजीवन इन्हें ऑक्सीजनकी आवश्यकता पड़ेगी और इनका बेडसे उठ पाना भी शायद ही सम्भव होगा। यह दैवीय चमत्कार नहीं तो और क्या है? प्रभुकी ऐसी कृपा हुई कि दस दिनोंके अन्दर ही उनकी ऑक्सीजनकी जरूरत समाप्त हो गयी और लगभग २० दिनों बाद वे धीरे-धीरे टहलने लगे हम लोगोंका पाठका क्रम १२ जुलाईतक चलता रहा यह सिर्फ-और-सिर्फ प्रभुकी कृपा और पितरोंके आशीर्वादके फलस्वरूप ही सम्भव हो पाया है। हमारा पूरा परिवार प्रभुके इस चमत्कारके आगे नतमस्तक है। उन्हें कोटि-कोटि नमन।—अरुणकुमार पोद्दार

मनन करने योग्य

नाम-जपके कुछ चमत्कार

(१)

मारवाड़में एक फूलीबाई जाटणी हुई है। वह भगवान्‌का नाम लेती थी। उसका काम था थेपड़ी थापनेका। वह गोबरकी थेपड़ी थापती थी। किसीने उसकी थेपड़ी ले ली, तो वह उसके यहाँ गयी और बोली—तूने मेरी थेपड़ी ले ली। उसने कहा—मैंने नहीं ली। अगर मैंने ली है तो उसकी क्या पहचान है तेरे पास? फूलीबाईने कहा—थेपड़ी लगाओ कानसे। उसने कानसे लगाया तो उसमें 'राम-राम-राम' की ध्वनि निकल रही थी। थेपड़ीमें नाम-जप हो रहा था। उसने आश्चर्यसे कहा—इसमें तो 'राम-राम-राम' हो रहा है। फूलीबाईने कहा—यही तो है हमारी पहचान?

'यह डोकरी (बुढ़िया) भगवान्‌की भक्ता है'—ऐसा सुन करके एक बार जोधपुर दरबारने उसको बुलाकर रनिवासमें इस वास्ते भेजा कि रानियोंको सत्संग नहीं मिलता। अत: यह बाई वहाँ चली जाय, तो कुछ सत्संग हो जाय। बेचारी फूलीबाई ऊँचा-ऊँचा घाघरिया पहने ग्रामीण वेशमें वैसे ही रनिवासमें चली गयी। उसको देखकर सब रानियाँ हँस पड़ीं कि क्या तमाशा आयी है। तो फूलीबाई अपनी सीधी-सादी भाषामें बोली—

'ए गहणो गांठो तन की शोभा, काया काचो भांडो।
फूली कहे थे बैठी काँई राम भजो ए रांडो॥

ये सुन्दर गहने पहन करके थे (तुम) बैठी हो, 'राम-राम' क्यों नहीं करो। क्या करोगी? ***'काया काचो भांडो'***, न जाने कब फूट जाय। ऐसेमें बैठकर थे भजन नहीं करो तो थे क्या करो राँडो, बैठी 'राम-राम' करो न? फूलीबाईको यह संकोच नहीं है कि मैं कैसे बोलती हूँ? क्या कहती हूँ? उसकी तो यह सीधी-सादी वाणी है।

(२)

बंगालमें चैतन्य महाप्रभु भगवान्‌के नामके बड़े प्रेमी हुए हैं। उनके यहाँ कोई एक भक्त था। वह ***'हरे कृष्ण हरे कृष्ण...... '*** निरन्तर जप करता रहता था। किसीने चैतन्य महाप्रभुसे जाकर कह दिया—'महाराज! यह तो टट्टी फिरता हुआ भी नाम जपता रहता है।' जब उससे पूछा गया तो उसने कहा 'ऐसा होता तो है।' चैतन्य महाप्रभुने बुलाकर उससे कहा—'उस समय खयाल रखा कर, बोला मत कर।' अब वह क्या करता? टट्टी फिरता तो जीभको पकड़ लेता। फिर उसकी लोगोंने शिकायत की—'महाराज! यह टट्टी जाते समय जीभको पकड़े रखता है।' महाप्रभुने कहा—'तू यह क्या करता है?' तो उसने कहा—'महाराज! मैं क्या करूँ, जीभ मानती ही नहीं, पर आपने कह दिया, इसलिये आपकी आज्ञापालन करनेके लिये जीभको पकड़ लेता हूँ।' तब उन्होंने कहा कि 'तेरे लिये किसी अवस्थामें नाम जपनेमें कोई दोष नहीं है, पर जीभ मत पकड़ा कर।'

(३)

ऐसे ही अर्जुनकी बात आती है। अर्जुनके सोते समय 'कृष्ण-कृष्ण' नाम उच्चारण होता रहता था। इसी कारण एक बार अर्जुन जब सो रहे थे, तो वहाँ नारदजी, शंकरजी, ब्रह्माजी सब आ गये। बड़े-बड़े सन्त इकट्ठे हो गये। भगवान् भी आ गये। अर्जुनके रोम-रोमसे नामोच्चारण हो रहा था।

(४)

गोरखपुरके पास ही बरहज गाँवमें एक परमहंसजी महाराज रहा करते थे। उनके शिष्यका नाम श्रीराघवदासजी था। वे उत्तरप्रदेशके गाँधी कहे जाते थे। उन परमहंसजी महाराजके शरीरको छुआ जाता तो 'ॐ' का उच्चारण होता। एक बार पहलवान राममूर्तिजी उनसे मिलनेके लिये गये। परमहंस बाबाके पैरकी अँगुली और अँगूठेसे जप हो रहा था। उन्होंने पहलवानसे कहा—अँगूठेको हिलनेसे रोको। परंतु वे अँगूठेको रोक नहीं सके। तो राघवदासने कहा कि 'तुम्हारेमें जितना बल है। उससे ज्यादा बल तो बाबाके एक अँगूठेमें है।' नाम-महाराजका कितना विलक्षण प्रभाव है।

॥ श्रीहरिः ॥

(भक्ति, ज्ञान, वैराग्य और सदाचार-सम्बन्धी सचित्र मासिक पत्र)

'कल्याण'

-के ९६वें वर्ष (वि०सं० २०७८-७९, सन् २०२२ ई०)-के दूसरे अङ्कसे बारहवें अङ्कतकके

निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी वार्षिक विषय-सूची

(विशेषाङ्ककी विषय-सूची उसके आरम्भमें देखनी चाहिये, वह इसमें सम्मिलित नहीं है।)

निबन्ध-सूची

विषय	पृष्ठ-संख्या
१- अध्यात्म (श्रीशम्भूनाथजी पाण्डेय)	सं०५-पृ०३२
२- अनजाने कर्मका फल	सं०८-पृ०४२
३- अनासक्ति और संन्यास (स्वामी श्रीसच्चिदानन्देन्द्र सरस्वतीजी महाराज)	सं०११-पृ०३०
४- अर्पण (श्रीगौतम सिंहजी पटेल)	सं०१०-पृ०२१
५- आत्मविजय (साधुवेशमें एक पथिक)	सं०७-पृ०१६
६- आत्माकी खोज ही गीता है (श्रीओमप्रकाशजी पोद्दार)	सं०४-पृ०३३
७- आध्यात्मिक जीवन (ब्रह्मलीन स्वामी श्रीदयानन्द गिरिजी महाराज)	सं०२-पृ०३०
८- **आवरणचित्र-परिचय—**	
[क] भगवती श्रीसीताजी	सं०२-पृ०७
[ख] देवताओं और मुनियोंकी विवाहहेतु शिवसे प्रार्थना	सं०३-पृ०७
[ग] शेषावतार भगवान् श्रीरामानुजाचार्य	सं०४-पृ०७
[घ] भगवान् परशुराम	सं०५-पृ०७
[ङ] धनुर्विद्याका अद्भुत चमत्कार	सं०६-पृ०७
[च] अर्जुनको पाशुपतास्त्रकी प्राप्ति	सं०७-पृ०७
[छ] भगवान् श्रीकृष्णका सायंकालिक ध्यान	सं०८-पृ०७
[ज] श्रीरामका पिताको जलदान	सं०९-पृ०६
[झ] गरुड़के जन्म और विष्णुवाहन बननेकी कथा	सं०१०-पृ०७
[ञ] समुद्र-मन्थनसे कामधेनुका प्राकट्य	सं०११-पृ०७
[ट] श्रीभगवान्द्वारा अर्जुनको कर्तव्यबोध	सं०१२-पृ०७
९- उपनिषदोंमें प्रणव-निरूपण (डॉ० श्रीइन्द्रमोहनजी झा 'सच्चन')	सं०४-पृ०३०
१०- कबीरका सामाजिक चिन्तन (डॉ० श्रीफूलचन्द प्रसादजी गुप्त)	सं०६-पृ०३४
११- **कल्याण—** सं०२-पृ०६, सं०३-पृ०६, सं०४-पृ०६, सं०५-पृ०६, सं०६-पृ०६, सं०७-पृ०६, सं०८-पृ०६, सं०९-पृ०६, सं०१०-पृ०६, सं०११-पृ०६, सं०१२-पृ०६	
१२- कल्याणके आगामी वर्ष सन् २०२३ ई० का विशेषाङ्क **'दैवीसम्पदा-अङ्क'**	सं०५-पृ०४७
१३- 'कस न होइ मगु मंगलदाता' (श्रीसुभाषचन्द्रजी बग्गा)	सं०९-पृ०२०
१३- काम-प्रभावसे भगवान् ही बचाते हैं	सं०३-पृ०१७
१५- कालिदासके काव्यमें काश्मीर-वर्णन (डॉ० श्रीसीतारामजी सहगल, एम्० ए०, पी-एच०डी०)	सं०६-पृ०३९
१६- काशीनरेशकी गो-भक्ति	सं०३-पृ०४२
१७- काश्मीरनरेशकी गोभक्ति	सं०६-पृ०४३
१८- **कृपानुभूति—** सं०२-पृ०४६, सं०३-पृ०४५, सं०४-पृ०४६, सं०५-पृ०४२, सं०६-पृ०४६, सं०७-पृ०४५, सं०८-पृ०४६, सं०९-पृ०४६, सं०१०-पृ०४६, सं०११-पृ०४६, सं०१२-पृ०४१	
१९- कौन-सा मार्ग ग्रहण करें? (प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र)	सं०८-पृ०३५
२०- गीतापाठके अद्भुत चमत्कार (श्रीसुरेशचन्द्रजी मिश्र)	सं०१२-पृ०३९
२१- गीताप्रेस-शताब्दीवर्ष-समारोहका भव्य शुभारम्भ	सं०७-पृ०५०
२२- गीता ब्रह्मविद्या है (श्रीओमप्रकाशजी पोद्दार)	सं०५-पृ०२३
२३- गीतामें जीवन-दृष्टि और व्यक्तित्व-विकासके सूत्र (श्रीप्रभुनारायणजी श्रीवास्तव)	सं०७-पृ०२२
२४- गुप्त नवरात्र (श्रीकौशलजी पाण्डेय)	सं०४-पृ०२६
२५- **गो-चिन्तन—**	
[क] सन्त माधवदासकी गोभक्ति	सं०२-पृ०४२
[ख] तुकारामका गो-प्रेम	सं०३-पृ०४२
[ग] गोपालनमें सुधारकी अनिवार्यता (श्रीमुल्कराजजी विरमानी)	सं०४-पृ०४२
[घ] गोरक्षापर श्रीजयप्रकाशनारायणजीके विचार	सं०५-पृ०३९
[ङ] नामदेवका गौके लिये प्राणदान	सं०६-पृ०४३
[च] गौरा (श्रीमती महादेवीजी वर्मा)	सं०७-पृ०४०
[छ] भारतीय संस्कृतिकी मूलाधार—गौ (गोरक्षपीठाधीश्वर योगी श्रीआदित्यनाथजी महाराज, मुख्यमन्त्री उत्तरप्रदेश सरकार)	सं०८-पृ०४३
[ज] गायका दूध बढ़ानेके उपाय	सं०८-पृ०४४
[झ] महाराज विक्रमादित्यकी गोभक्ति	सं०९-पृ०४२
[ञ] बन्धनमुक्त गाय स्वस्थ और दुधार होती है (श्रीमुल्कराजजी विरमानी)	सं०१०-पृ०३६
[ट] गाय स्वस्थ तो पालक, समाज और देश धनवान् (श्रीमुलकराजजी बिरमानी)	सं०११-पृ०४२
[ठ] गोसंरक्षण—श्रीकृष्णावतारका मुख्य उद्देश्य	

२६- जपका रहस्य (श्रीरामलालजी पहाड़ा) ..... सं०८-पृ०२९
२७- जम्बूद्वीप (एशिया)-की पौराणिक पर्वतीय संरचना
(प्रो० श्रीअभिराजराजेन्द्रजी मिश्र) ..... सं०३-पृ०३१
२८- जल—एक अद्भुत औषधि
(श्रीगोविन्दराम वासुदेवजी राठी) ..... सं०५-पृ०३१
२९- जलाशय-निर्माणका फल ..... सं०१०-पृ०१६
३०- जहाँ प्रेम है, वहीं ईश्वर है (लियो टॉलस्टाय) ..... सं०६-पृ०२१
३१- जीवनका यथार्थ—सतत सुकर्मशीलता
(श्रीपीयूषकुमारजी त्रिपाठी) ..... सं०१२-पृ०२९
३२- जीवन जीना और ढोना
(श्रीदीनानाथजी झुनझुनवाला) ..... सं०२-पृ०३१
३३- जीवनमें सद्गुणोंकी वृद्धि कैसे हो ?
[प्रेषक—प्रो० श्रीसन्तोष कुमारजी तिवारी] ..... सं०८-पृ०२८
३४- झेन साधनाकी रहस्यमयी कुंजी (श्रीरामशास्त्रीजी) सं०८-पृ०३२
३५- ढलता जीवन (श्रीइन्द्रमलजी राठी) ..... सं०१०-पृ०२५
३६- **तीर्थ-दर्शन—**
[क] ब्रजक्षेत्रका प्राचीन तीर्थ—वटेश्वर
(श्रीजगन्नाथजी लहरी) ..... सं०२-पृ०३९
[ख] उज्जैनका महाकाल-ज्योतिर्लिंग
(पं० श्रीआनन्दशंकरजी व्यास) ..... सं०३-पृ०२३
[ग] हिमाचलकी आस्थाकी प्रतीक—श्रीबज्रेश्वरीदेवी
(श्रीउदयजी ठाकुर) ..... सं०४-पृ०३७
[घ] श्रीपुरी धाम
(आचार्य श्रीजगन्नाथप्रसादजी गुप्त) ..... सं०६-पृ०२९
[ङ] भूतधात्री युगाद्या शक्तिपीठ—क्षीरग्राम
(श्रीप्रदीपकुमारजी) ..... सं०७-पृ०२९
[च] रुद्रेश्वर महादेव (श्रीप्रदीपकुमारजी) ..... सं०८-पृ०३८
[छ] शिवपूजनकी महनीय धरती मगध
(डॉ० राकेश कुमार सिन्हा 'रवि') ..... सं०९-पृ०३७
[ज] हरियाणाका पिहोवा (पृथूदक) तीर्थ
(डॉ० श्रीरनबीर सिंहजी, एम०टी०एम०,
पी-एच०डी०) ..... सं०१०-पृ०३०
[झ] उत्तराखण्डके आराध्य टपकेश्वर महादेव
(श्रीउदयजी ठाकुर) ..... सं०११-पृ०३५
[ञ] कश्मीरका शंकराचार्य-मन्दिर
(श्रीबलविन्दरजी 'बालम') ..... सं०१२-पृ०२८
३७- 'तुलसी कथा रघुनाथ की' (जयदीप सिंह) ..... सं०८-पृ०१८
३८- द्वितीयाका बालचन्द्र (श्रीयोगेन्द्रकुमारजी नागर) ... सं०५-पृ०३५
३९- दृढ़ निश्चयकी शक्ति (श्रीकृष्णचन्द्रजी टवाणी) ... सं०१०-पृ०२०
४०- धन्य कौन ? ..... सं०५-पृ०१०
४१- नन्द-देहरीमें अटका ब्रह्म—एक अद्भुत लीला ..... सं०२-पृ०१८
४२- नन्दादेवीकी प्राकट्य-कथा ..... सं०४-पृ०१७
४३- 'न मे भक्तः प्रणश्यति' ..... सं०२-पृ०२२
४४- नव संवत्सर—नयी ऊर्जाके प्राकट्यका अवसर
(प्रो० डॉ० श्रीगिरिजाशंकरजी शास्त्री)... ..... सं०४-पृ०२३
४६- नवीन मनोविज्ञान और योग
(पं० श्रीलालजीरामजी शुक्ल) ..... सं०६-पृ०१६
४७- नागपंचमी-व्रत-माहात्म्य ..... सं०८-पृ०२६
४८- 'नामु राम को कलपतरु' (श्रीगजाननजी पाण्डेय)... सं०४-पृ०२५
४९- **नित्यलीलालीन भाईजी श्रीहनुमानप्रसादजी पोद्दार—**
[क] प्रेमका स्वरूप ..... सं०२-पृ०११
[ख] होलीके त्यौहारपर हमारा कर्तव्य ..... सं०३-पृ०१२
[ग] श्रीरामनवमी ..... सं०४-पृ०१४
[घ] तीन प्रकारके यात्री ..... सं०५-पृ०११
[ङ] प्रेम-तत्त्व ..... सं०६-पृ०१५
[च] गुरु-तत्त्व ..... सं०७-पृ०१५
[छ] लीलामयकी लीलाएँ ..... सं०८-पृ०१३
[ज] तीन प्रकारके प्रारब्ध ..... सं०९-पृ०१४
[झ] चेतावनी ..... सं०१०-पृ०१५
[ञ] श्रीरामचरितमानस सच्चा इतिहास है ..... सं०११-पृ०१०
[ट] महाभारतमें अधर्म और धर्मका युद्ध ..... सं०१२-पृ०१०
५०- 'निन्दक नियरे राखिये' (श्रीताराचन्दजी आहूजा) .. सं०२-पृ०२०
५१- निबन्धों, कविताओं और संकलित सामग्रियोंकी
वार्षिक विषय-सूची ..... सं०१२-पृ०४६
५२- **पढ़ो, समझो और करो—**
सं०२-पृ०४७, सं०३-पृ०४७, सं०४-पृ०४७, सं०५-पृ०४३, सं०६-पृ०४७, सं०७-पृ०४६, सं०८-पृ०४७, सं०९-पृ०४७, सं०१०-पृ०४७, सं०११-पृ०४७, सं०१२-पृ०४२
५३- परम श्रेष्ठ बिरवा तुलसीका (डॉ० श्रीसुरेशचन्द्रजी
श्रीवास्तव, एल०-एल०बी०, साहित्यवाचस्पति) सं०११-पृ०२४
५४- परलोक-विचार (तत्त्वदर्शी महात्मा श्रीतैलंग
स्वामीजीका उपदेश) ..... सं०९-पृ०१५
५५- परिग्रहसे परिताप (श्रीताराचन्दजी आहूजा) ..... सं०१२-पृ०३१
५६- पर्यावरण-प्रदूषण—समस्या और समाधान
(श्रीमिथिलेश कुमारजी शुक्ल) ..... सं०९-पृ०२८
५७- पहले अमृत-सा, पीछे जहर-सा
(श्रीमगनलाल हरिभाईजी देसाई) ..... सं०५-पृ०९
५८- पूर्वजन्मके कर्म प्रभावित करते हैं स्वास्थ्य
(प्रो० श्रीअनूपकुमारजी गक्खड़) ..... सं०३-पृ०३५
५९- पंचमहायज्ञ (गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवरामचन्द्र
डोंगरेजी महाराज) ..... सं०२-पृ०९
६०- प्रभु श्रीराम और जटायुका प्रथम मिलन
(श्रीजगदीशप्रसादजी गुप्त) ..... सं०३-पृ०१९
६१- प्रसन्नता तो आपके आस-पास ही है
(श्रीबलविन्दरजी 'बालम') ..... सं०७-पृ०२७
६२- प्राचीनताको अक्षुण्ण रखना आवश्यक ..... सं०३-पृ०३०
६३- प्रेमी पाठकोंसे नम्र-निवेदन ..... सं०२-पृ०५
६४- 'प्यार बच्चोंपर लुटायें तो कोई बात बने'
(सुश्री कृष्णा कुमारीजी) ..... सं०११-पृ०३७
६५- बड़भागी हनुमान्‌जी (साकेतवासी श्रद्धेय स्वामी

६६- बोझ प्रभुके कंधेपर (संत श्रीविनोबाजी भावे) ..... सं०४-पृ०१५
६७- **बोधकथा—**
[क] अन्नदोष ..... सं०३-पृ०२२
[ख] अपनी कमाईका पकवान ताजा! ..... सं०३-पृ०३४
[ग] असहायके आश्रय ..... सं०१२-पृ०४०
[घ] आश्रितका त्याग उचित नहीं ..... सं०७-पृ०१७
[ङ] कष्टोंका मूल्य ..... सं०११-पृ०३६
[च] खूब विचारकर कार्य करना चाहिये ..... सं०७-पृ०३८
[छ] गरीबोंकी उपेक्षा पूरे समाजके लिये घातक है .... सं०३-पृ०३६
[ज] तुकारामजीकी शान्ति ..... सं०४-पृ०१६
[झ] नियम-पालनका लाभ ..... सं०१२-पृ०२४
[ञ] परमात्मा सर्वव्यापक है ..... सं०४-पृ०४१
[ट] परिश्रम गौरवकी वस्तु है ..... सं०१२-पृ०२१
[ठ] पंजाब-केसरीकी उदारता ..... सं०२-पृ०१९
[ड] भगवद्गीताका अद्भुत माहात्म्य ..... सं०४-पृ०३६
[ढ] महल नहीं, धर्मशाला ..... सं०१२-पृ०३०
[ण] वरणीय दुःख है, सुख नहीं ..... सं०४-पृ०२९
[त] सत्यकी शक्तिका अद्भुत चमत्कार (श्रीरघुनाथप्रसादजी पाठक) ..... सं०१२-पृ०१६
[थ] सभ्यता ..... सं०२-पृ०४२
[द] समय नहीं है ..... सं०१२-पृ०१३
[ध] सर्वोत्तम धन ..... सं०४-पृ०३१
६८- **ब्रह्मलीन परम श्रद्धेय श्रीजयदयालजी गोयन्दका—**
[क] परमात्मा परम दयालु हैं ..... सं०२-पृ०८
[ख] 'यतो धर्मस्ततो जयः' ..... सं०३-पृ०८
[ग] जीवन-निर्माणकी बातें ..... सं०४-पृ०८
[घ] धर्मो रक्षति रक्षितः ..... सं०५-पृ०८
[ङ] स्त्री-पुरुषके परस्पर कर्तव्य ..... सं०६-पृ०८
[च] सत्संगकी कुछ सार बातें ..... सं०७-पृ०८
[छ] पिता-पुत्र-सम्बन्धसे भी बढ़कर है धर्म ..... सं०८-पृ०८
[ज] मरणासन्नको भगवन्नाम सुनाना अति महत्त्वपूर्ण ..... सं०९-पृ०९
[झ] हिन्दू-संस्कृतिका स्वरूप ..... सं०१०-पृ०११
[ञ] पुराण-महिमा ..... सं०११-पृ०८
[ट] महापुरुषोंकी महिमा ..... सं०१२-पृ०८
६९- **ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीशरणानन्दजी महाराज—**
[क] सुख-दुःख ..... सं०२-पृ०४३
[ख] भवरोगकी दवा ..... सं०३-पृ०४१
[ग] मूर्तिपूजा ..... सं०४-पृ०४३
[घ] शरणागति ..... सं०५-पृ०३८
[ङ] निष्काम कर्मद्वारा परमात्माकी प्राप्ति ..... सं०६-पृ०२७
[च] धनोपार्जनका उचित और अनुचित रूप ..... सं०८-पृ०४५
[छ] विद्या और शिक्षा ..... सं०९-पृ०४३
[ज] गुरुसे उऋण कैसे हों? ..... सं०१०-पृ०१७
[झ] धीर, वीर और गम्भीर ..... सं०११-पृ०१२
७०- भक्त पलटूदास ..... सं०७-पृ०३०
७१- भगवत्कृपाकी अद्भुत महिमा ..... सं०११-पृ०४१
७२- भगवन्नाम-चिन्तन ..... सं०१२-पृ०३४
७३- भगवन्नाम-जपकी महिमा ..... सं०१०-पृ०४३
७४- भगवन्नाम-जपकी शुभ सूचना ..... सं०१०-पृ०४१
७५- भगवन्नाम-जपके लिये विनीत प्रार्थना ..... सं०१०-पृ०४४
७६- भगवन्नाम-स्मरण भगवान्‌की कृपासे ही होता है (ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज) ..... सं०११-पृ०३४
७७- भगवान् श्रीकृष्णका उद्धवको ज्ञानोपदेश (श्रीअर्जुनकुमारजी बन्सल) ..... सं०९-पृ०३०
७८- भगवान् श्रीरामके दत्तक पुत्र (श्रीगोविन्दप्रसादजी मिश्र) ..... सं०७-पृ०१९
७९- भगवान् श्रीरामचन्द्र—सर्वमान्य आदर्श (परमपूज्य गुरुजी श्रीमाधवराव सदाशिवराव गोलवलकर) ... सं०११-पृ०११
८०- भक्तिकी शिखर-साधना (श्रीसुरेशजी शर्मा) ..... सं०३-पृ०२१
८१- भक्तिपथके पाँच बड़े काँटे ..... सं०८-पृ०१६
८२- भागवतकी आत्मा—चतुःश्लोकी (डॉ० श्रीयुत श्रीभागवतशरणजी मिश्रा) ..... सं०४-पृ०२८
८३- भारतीय प्रतिमा-कलामें बलदेवजीका स्थान (डॉ० श्रीभगवतीलालजी राजपुरोहितजी) ..... सं०७-पृ०३७
८४- भौतिक जगत्‌पर सूक्ष्म जगत्‌का प्रभाव (श्रीनलिनीकान्त गुप्त, श्रीअरविन्दाश्रम, पांडिचेरी) सं०३-पृ०१०
८५- मन एवं इन्द्रियोंसे सावधान! (प्रो० श्रीशैलजानन्दजी झा 'अंगार', एम० ए०) ... सं०५-पृ०२८
८६- **मनन करने योग्य—**
सं०२-पृ०५०, सं०३-पृ०५०, सं०४-पृ०५०, सं०५-पृ०४६, सं०६-पृ०५०, सं०७-पृ०४९, सं०८-पृ०५०, सं०९-पृ०५०, सं०१०-पृ०५०, सं०११-पृ०५०, सं०१२-पृ०४५
८७- मनुष्य-जन्मकी सार्थकता (श्रीसलिलजी पाण्डेय) . सं०२-पृ०२४
८८- मनोमय कोशका स्वरूप एवं साधना-पद्धतिकी सार्वभौमिकता (डॉ० श्रीविनोदजी शर्मा) ..... सं०२-पृ०३३
८९- माधवका जीवनदर्शन (ब्रह्मलीन जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी श्रीस्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज) ..... सं०११-पृ०१५
९०- मान और अभिमान (श्रीगणेशलालजी, कर्णप्रवासी) सं०२-पृ०२३
९१- मानस और मानसकार—एक परिचय (आचार्य श्रीरसिकबिहारीजी 'मंजुल') ..... सं०६-पृ०३६
९२- मृत्युका दर्शन (डॉ० श्री गो० दा० फेगडे) ..... सं०९-पृ०२२
९३- मैं कौन हूँ? [Who Am I?] ..... सं०६-पृ०२०
९४- 'मैं तुम्हारे साथ हूँ' ..... सं०५-पृ०१६
९५- मौनके क्षणोंमें दिव्य 'नाद' (श्रीसुदेशजी गोगिया). सं०१०-पृ०१९
९६- रामसखा वानरराज सुग्रीवका शौर्य (डॉ० श्रीअजित कुमार सिंहजी, एम०ए०, पी-एच०डी०) ..... सं०३-पृ०२८
९७- 'रामहि केवल प्रेमपिआरा' (श्रीसुरेशजी शर्मा) ..... सं०९-पृ०२५
९८- लंकाकी अधिष्ठात्रीदेवीद्वारा निशाचर-संहारकी

९९- लक्ष्मणकी जिज्ञासा (डॉ० श्रीआदित्यजी शुक्ल) . सं०११-पृ०२६
१००- वरदान हैं विफलताएँ (डॉ० शैलजाजी) ..... सं०१०-पृ०२३
१०१- विरह-सागरका चतुर नाविक
(पं० श्रीगोविन्दप्रसादजी मिश्र) ..... सं०२-पृ०२५
१०२- व्रज-विभूति ..... सं०९-पृ०७
१०३- **व्रतोत्सव-पर्व—**
चैत्रमासके व्रत-पर्व ..... सं०२-पृ०४५
वैशाखमासके व्रत-पर्व ..... सं०३-पृ०४४
ज्येष्ठमासके व्रत-पर्व ..... सं०४-पृ०४५
आषाढ़मासके व्रत-पर्व ..... सं०५-पृ०४१
श्रावणमासके व्रत-पर्व ..... सं०६-पृ०४५
भाद्रपदमासके व्रत-पर्व ..... सं०७-पृ०४४
आश्विनमासके व्रत-पर्व ..... सं०९-पृ०४५
कार्तिकमासके व्रत-पर्व ..... सं०१०-पृ०३९
मार्गशीर्षमासके व्रत-पर्व ..... सं०१०-पृ०४०
पौषमास के व्रत-पर्व ..... सं०११-पृ०४५
माघमासके व्रत-पर्व ..... सं०१२-पृ०३७
फाल्गुनमासके व्रत-पर्व ..... सं०१२-पृ०३८
१०४- शुभवृत्तिका सुपरिणाम (श्रीविमलेन्दुजी चटर्जी)..सं०५-पृ० .२६
१०५- **श्रीकृष्णदत्तजी भट्ट—**
[क] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०२-पृ०१३
[ख] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०३-पृ०१४
[ग] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०४-पृ०९
[घ] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०५-पृ०१२
[ङ] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०६-पृ०९
[च] जब अपवित्र विचार घेरते हैं! ..... सं०७-पृ०९
[छ] उत्तेजनाके क्षणोंमें ..... सं०८-पृ०९
[ज] उत्तेजनाके क्षणोंमें ..... सं०९-पृ०१०
[झ] उत्तेजनाके क्षणोंमें ..... सं०१०-पृ०१२
[ञ] उत्तेजनाके क्षणोंमें ..... सं०११-पृ०२१
[ट] यह 'और' 'और'की तृष्णा! ..... सं०१२-पृ०१७
१०६- श्रीमद्भगवद्गीताकी महिमा
[संकलन—स्वामी श्रीसंवित्सुबोधगिरिजी] ..... सं०१२-पृ०२५
१०७- श्रीराधा-माधव—कहिअत भिन्न न भिन्न (अनन्त-श्रीविभूषित ज्योतिष्पीठाधीश्वर एवं द्वारकाशारदा-पीठाधीश्वर जगद्गुरु शङ्कराचार्य स्वामी स्वरूपानन्द सरस्वतीजी महाराज) ..... सं०१२-पृ०१४
१०८- श्रीरामचरितमानसमें 'ब्राह्मण' की परिभाषा (डॉ० श्रीहरिहरनाथजी हुक्कू, एम० ए०, डी० लिट०) ... सं०५-पृ०१९
१०९- श्रीरामचरितमानसमें मायाके प्रभावका निरूपण
(डॉ० श्रीफूलचन्द प्रसादजी गुप्त) ..... सं०३-पृ०३७
११०- श्रीहनुमान-चालीसाकी रचना
(श्रीविश्वशान्ति टेकड़ीवाल परिवारकी प्रस्तुति) .. सं०११-पृ०२९
१११- श्रीहनुमान-चालीसा-चिन्तन (पं० श्रीकपिलदेवजी तैलंग, एम०ए०, बी०एड०, साहित्यरत्न) ..... सं०११-पृ०१८
११३- सच्चा सेवक बननेका उपाय ..... सं०८-पृ०४५
११४- 'सच्चा सौदा नामका····'
(प्रेमप्रकाशी सन्त श्रीमोनूरामजी) ..... सं०६-पृ०२८
११५- सच्चा ज्ञान (गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज) ..... सं०६-पृ०३२
११६- सद्योमुक्तिके कुछ प्रेरणास्पद आर्ष दृष्टान्त
(आचार्य श्रीगोविन्दरामजी शर्मा) ..... सं०१०-पृ०२७
११७- सन्त-तत्त्व-विवेचन
(साधुवेषमें एक पथिक) ..... सं०१२-पृ०९
११८- सन्त-स्वभाव (श्रीचारुचन्द्रशीलजी) ..... सं०४-पृ०१९
११९- सफल राजनीतिज्ञ भगवान् श्रीकृष्ण
(श्रीवासुदेवजी शर्मा) ..... सं०८-पृ०२०
१२०- समरूप रहकर ही क्रोधपर नियन्त्रण
(श्रीविजयजी सिंगल) ..... सं०८-पृ०३४
१२१- **सम्पादकीय**—सं०२-पृ०५, सं०३-पृ०५, सं०४-पृ०५, सं०५-पृ०५, सं०६-पृ०५, सं०७-पृ०५, सं०८-पृ०५, सं०९-पृ०५, सं०१०-पृ०५, सं०११-पृ०५, सं०१२-पृ०५
१२२- सम्पूर्ण जीवन ही ईश्वरकी पूजा बन जाय
(स्वामी श्रीसच्चिदानन्देन्द्र सरस्वतीजी महाराज) ... सं०८-पृ०३६
१२३- सरल जीवन ही सच्चा ज्ञान है
(श्रीदिलीपजी देवनानी) ..... सं०४-पृ०३२
१२४- सहानुभूतिके दो मीठे शब्द!
(प्रो० श्रीरामचरणजी महेन्द्र, एम०ए०) ..... सं०१२-पृ०२२
१२५- सात्त्विक वृत्ति (श्रीसुरेशचन्द्रजी) ..... सं०८-पृ०२४
१२६- संकीर्तनसे रोगमुक्ति (वैद्य श्रीबालकृष्णजी गोस्वामी) .. सं०५-पृ०३३
१२७- संस्कृति, धर्म एवं आस्थाकी पर्याय—गंगा
(प्रो० श्रीअभिराज राजेन्द्रजी मिश्र) ..... सं०७-पृ०३२
१२८- स्थानका मनपर प्रभाव (गोलोकवासी सन्त श्रीकेशवरामचन्द्र डोंगरेजी महाराज) ..... सं०८-पृ०१५
१२९- **साधकोंके प्रति**—(ब्रह्मलीन श्रद्धेय स्वामी श्रीरामसुखदासजी महाराज)
[क] संयोगमें वियोगका दर्शन ..... सं०२-पृ०१७,
[ख] मुक्तिका रहस्य ..... सं०३-पृ०१८
[ग] जाग्रत्में सुषुप्ति ..... सं०४-पृ०१६
[घ] हमारा स्वरूप सच्चिदानन्द है ..... सं०५-पृ०१७
[ङ] दृश्यमात्र अदृश्यमें जा रहा है ..... सं०६-पृ०१९
[च] कर्तव्य ..... सं०७-पृ०१८
[छ] तत्त्वज्ञान ..... सं०८-पृ०१७
[ज] भगवान्से सम्बन्ध (अपनापन) ..... सं०९-पृ०१९
[झ] बन्धन और मुक्ति ..... सं०१०-पृ०१८
[ञ] संघर्षका कारण ..... सं०११-पृ०१३
[ट] गीतोक्त श्लोकोंके अनुष्ठानकी विधि ..... सं०१२-पृ०१२
१३०- साधनामें बाधक घृणा ..... सं०५-पृ०३४
१३१- सुख-दुःख (श्रीलालजी मिश्र) ..... सं०११-पृ०३२
१३२- **सुभाषित-त्रिवेणी—**
[क] भक्तके लक्षण ..... सं०२-पृ०४४

[ग] परमात्माका स्वरूप ..... सं०४-पृ०४४
[घ] दैवी एवं आसुरी प्रकृति ..... सं०५-पृ०४०
[ङ] नारायण-स्तवन ..... सं०६-पृ०४४
[च] चारों वर्णोंके कर्तव्य ..... सं०७-पृ०४३
[छ] पण्डितके लक्षण ..... सं०९-पृ०४४
[ज] मूढ़की पहचान ..... सं०१०-पृ०३८
[झ] आत्माका स्वरूप ..... सं०११-पृ०४४
[ञ] गीतामें अवतारवाद ..... सं०१२-पृ०३६

१३३- **संत-चरित—**
[क] पर्यावरणप्रेमी सन्त श्रीजाम्भोजी महाराज (श्रीबद्रीनारायणजी विश्नोई, एम०ए०) ..... सं०२-पृ०३६
[ख] पंचरसाचार्य श्रीरामहर्षणदासजी महाराज (डॉ० श्रीराजेशजी उपाध्याय 'नार्मदेय') ... सं०३-पृ०४०
[ग] श्रीनारायणदासजी भक्तमाली 'मामाजी' (परम श्रद्धेय श्रीराधेश्यामजी खेमका, पूर्वसम्पादक 'कल्याण') ..... सं०४-पृ०३९
[घ] जीवन्मुक्त सन्त स्वामी श्रीनिगमानन्दजी महाराज (ब्रह्मचारी श्रीगोपालचैतन्यदेवजी) ..... सं०५-पृ०३६
[ङ] सन्त श्रीसियारामजी महाराज (एक भक्तहृदय) ..... सं०६-पृ०४१
[च] भगवत्तत्त्वदर्शी सन्त श्रीश्रीशंकर चैतन्य भारती (श्रीश्रीकृष्णजी पन्त) ..... सं०७-पृ०३९
[छ] हिमाचलकी साध्वी सत्यादेवी (प्रो० पूजा वशिष्टजी) ..... सं०९-पृ०३९
[ज] गृहस्थ सन्त परम भागवत पण्डित मिहीलालजी (श्रीराजकमलजी मिश्रा) ..... सं०८-पृ०३९
[झ] दक्षिणके सन्त श्रीराघवेन्द्र स्वामी (श्रीराघवेन्द्रश्रीधरजी राव) ..... सं०१०-पृ०३५
[ञ] गुरु गोरखनाथ—एक महायोगी (प्रो० श्रीरामदरश रायजी एम०ए०, पी-एच०डी०) ..... सं०११-पृ०३९
[ञ] छत्तीसगढ़के सन्त गुरु घासीदासजी (डॉ० श्रीप्रदीप कुमारजी शर्मा) ..... सं०१२-पृ०३३

१३४- संत-वचनामृत (वृन्दावनके गोलोकवासी सन्त पूज्य श्रीगणेशदासजी भक्तमाली) ..... सं०२-पृ०२९, सं०६-पृ०३३, सं०११-पृ०३१
१३५- संवत्सर-पूजन ... . सं०४-पृ०२४
१३६- हिन्दू संस्कारोंकी महानता (श्रीमती आशा सिंह) ..... सं०११-पृ०२०

पद्य-संकलन

१- परम ब्रह्म नमस्काराष्टक (श्रीशरदजी अग्रवाल) ... सं०९-पृ०३२
२- 'ये नववर्ष हमें स्वीकार नहीं' (श्रीरामधारी सिंहजी 'दिनकर') ..... सं०२-पृ०१०
३- 'रे मन! तू क्यों घबराता है' श्रीहरिओमकुमारजी श्रीवास्तव ..... सं०७-पृ०२१
४- शिव-स्तुति (श्रीब्रह्मबोधिजी) ..... सं०८-पृ०२५

संकलित

१- भगवती श्रीसरस्वती ..... सं०२, पृ०३
२- 'रघुपतिप्रियभक्तं वातजातं नमामि' ..... सं०३-पृ०३
३- मर्यादापुरुषोत्तम श्रीराम ..... सं०४-पृ०३
४- भगवान् नृसिंहकी स्तुति ..... सं०५-पृ०३
५- भगवान् कार्तिकेयकी स्तुति ..... सं०६-पृ०३
६- श्रीराम-लक्ष्मणकी गुरु-सेवा ..... सं०७-पृ०३
७- भगवान् शंकरकी वररूपमें प्राप्तिहेतु पार्वतीजीकी तपस्या ..... सं०८-पृ०३
८- देवताओंद्वारा सिंहवाहिनी दुर्गाकी स्तुति ..... सं०९-पृ०३
९- सरयूतटपर चारों भाई ..... सं०१०-पृ०३
१०- धनुष-भंग ..... सं०११-पृ०३
११- उद्धारकर्ता श्रीभगवान् ..... सं०१२-पृ०३

नवीन विशिष्ट प्रकाशन—छपकर तैयार

चित्रमय सुन्दरकाण्ड, मूल [ग्रन्थाकार] (कोड 2311) [चार रंगोंमें आर्ट पेपरपर] जिज्ञासु पाठकोंकी विशेष माँगपर चित्रमय श्रीरामचरितमानस (कोड 2295)-की तरह 70 से अधिक आकर्षक रंगीन चित्रोंके साथ पहली बार प्रकाशित। मूल्य ₹150

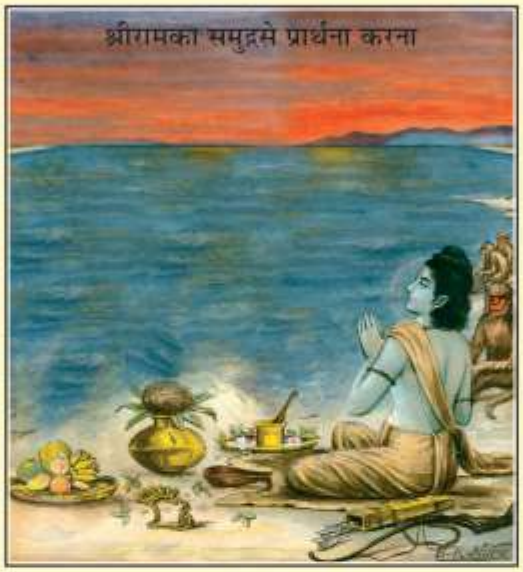

दो०—प्रभु तुम्हार कुलगुर जलधि कहिहि उपाय बिचारि।
बिनु प्रयास सागर तरिहि सकल भालु कपि धारि॥ ५०॥

सखा कही तुम्ह नीकि उपाई।
करिअ दैव जौं होइ सहाई॥
मंत्र न यह लछिमन मन भावा।
राम बचन सुनि अति दुख पावा॥
नाथ दैव कर कवन भरोसा।
सोषिअ सिंधु करिअ मन रोसा॥
कादर मन कहुँ एक अधारा।
दैव दैव आलसी पुकारा॥
सुनत बिहसि बोले रघुबीरा।
ऐसेहिं करब धरहु मन धीरा॥

प्र० ति० 20-11-2022
रजि० समाचारपत्र—रजि०नं० 2308/57 पंजीकृत संख्या—NP/GR-13/2020-2022
LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE No. WPP/GR-03/2020-2022

ग्राहकोंसे आवश्यक निवेदन

'कल्याण' का सन् 2022, दिसम्बर (कल्याण वर्ष-96)-का बारहवाँ अङ्क आपके हाथमें है इस अंकके साथ ही इस वर्षका समापन हो जायेगा। आगामी वर्ष 2023 ई०का विशेषाङ्क '**दैवीसम्पदा-अङ्क**' शीघ्र ही प्रकाशित होनेवाला है। भगवान्‌ने गीतामें दैवीसम्पदा और आसुरी-सम्पदाको दो भागोंमें बाँटकर जो दिग्दर्शन कराया है, उसकी कितनी महिमा है, कैसा माहात्म्य है, वर्तमान संदर्भमें उसकी क्या और कितनी आवश्यकता है, दैवी गुणसम्पत्तिको आत्मसात् करने और न करनेका क्या परिणाम होगा, आसुरी सम्पत्तिको सुख माननेका क्या दुष्परिणाम होगा और फिर कैसी दुर्गति होगी। इन्हीं सब बातोंको ध्यानमें रखकर इस अंकमें आसुरी सम्पत्तिके दोष एवं दैवी सम्पत्तिके गुणोंका विविध आख्यानों, पौराणिक कथानकों, आदर्श चरित्रों और रोचक कथाओंके माध्यमसे उसे पुष्ट करते हुए रोचक एवं कथात्मक सामग्री प्रकाशित की जा रही है। इस अङ्कका कार्य पूर्णताकी ओर अग्रसर है। अतः कल्याणके सम्मान्य ग्राहकोंको सदस्यता-शुल्क भिजवाकर अपना अङ्क सुरक्षित करा लेना चाहिये।

वार्षिक-शुल्क—₹ 300 **पंचवर्षीय-शुल्क—₹ 1500**

मासिक अङ्कोंकी सुनिश्चित उपलब्धिके लिये वार्षिक सदस्यता-शुल्क ₹ 300 के अतिरिक्त ₹ 200 देनेपर सभी 11 मासिक अङ्कोंको भी रजिस्टर्ड डाकसे भेजनेकी व्यवस्था की गयी है। इस सुविधाका लाभ उठाना चाहिये। 09235400242 / 244 फोन एवं **8188054404, 9648916010 WhatsApp** भी कर सकते हैं।

Online सदस्यता हेतु gitapress.org के Kalyan Menu में Subscribe option पर click करें।

व्यवस्थापक—'कल्याण-कार्यालय', पो० गीताप्रेस—273005

माघ-मेला प्रयाग (सन् 2023)

श्रद्धालुओंको चाहिये कि पौष शुक्ल पूर्णिमा (6 जनवरी, 2023 ई०)-से माघ शुक्ल पूर्णिमा (5 फरवरी, 2023 ई०)-तक पूरे एक मासतक कल्पवासी बनकर प्रयागमें रहें और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक नित्यप्रति पुण्यतोया त्रिवेणीमें स्नान-लाभ करते हुए धर्मानुष्ठान, सत्सङ्ग तथा दान-पुण्य करें—

स्नानकी प्रमुख तिथियाँ

1-पौष शुक्ल 15,	शुक्रवार	(6 जनवरी, 2023 ई०)	माघ-स्नानारम्भ।
2-माघ कृष्ण 8,	रविवार	(15 जनवरी, 2023 ई०)	मकर-संक्रान्ति।
3-माघ कृष्ण 30,	शनिवार	(21 जनवरी, 2023 ई०)	मौनी-अमावस्या।
4-माघ शुक्ल 5,	गुरुवार	(26 जनवरी, 2023 ई०)	वसन्तपंचमी।
5-माघ शुक्ल 7,	शनिवार	(28 जनवरी, 2023 ई०)	अचलासप्तमी, रथसप्तमी
6-माघ शुक्ल 15,	रविवार	(5 फरवरी, 2023 ई०)	माघीपूर्णिमा।

माघ-मेला प्रयाग क्षेत्रमें विशेष पुस्तक-स्टॉल लगानेका विचार है।

booksales@gitapress.org थोक पुस्तकोंसे सम्बन्धित सन्देश भेजें।
gitapress.org सूची-पत्र एवं पुस्तकोंका विवरण पढ़ें।
कूरियर/डाकसे मँगवानेके लिये गीताप्रेस, गोरखपुर—273005
book.gitapress.org / gitapressbookshop.in

If not delivered; please return to Gita Press, Gorakhpur—273005 (U.P.)